दैवज्ञ-भवन का ४ पुष्प

जन्मांग-नक्षत्रदीपिका

[नक्षत्रानुसारि जातक का पूर्ण फलविचार]

(प्रथम भाग)

—लेखक—

राजज्योतिषी श्रीलक्ष्मीनारायण त्रिपाठी

—प्रकाशक—

दैवज्ञ-भवन नरसिंहगढ़

(मध्यभारत)

प्रथमावृत्ति } गंगादशहरा २०१० वि० { मूल्य १॥) रुपया

प्रकाशक—
राजज्योतिषी श्रीप्रभुदयालु त्रिपाठी
दैवज्ञ-भवन, नरसिंहगढ़
(मध्यभारत)

काशी में पुस्तक प्राप्तिस्थान—
श्रीमहादेवप्रसाद कपूर
बीबीहटिया, बनारस

मुद्रक—
राममोहन शास्त्री
श्रीगोविन्द मुद्रणालय
काशी

लेखक का आत्मनिवेदन

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से आज हमे अपने कृपालु ग्राहकों की सेवा मे 'जन्माङ्ग-नक्षत्र-दीपिका' का यह प्रथम भाग भेट करने का शुभ-अवसर प्राप्त हो रहा है। यद्यपि पूर्वप्रदत्त सूचना के अनुसार इसे १॥ साल पूर्व ही प्रकाशित हो जाना चाहिये था और वैसा न होने से अनेक ग्राहकों को हमे पत्र भेजकर उसकी बार-बार माग करने का कष्ट उठाना पड़ा, फिर भी हम उसे पूरा न कर सके, इसका हमे खेद है। ढलती अवस्था और लम्बी अस्वस्थता के कारण ही हम एतदर्थ विवश हुए। तदर्थ ग्राहकों के क्षमाप्रार्थी है। प्रस्तुत पुस्तक करीब ४० फार्म की होगी और पूरे के प्रकाशन मे विलम्ब हो जायगा। अतएव इसे चार भागो मे बाटकर आज प्रथम भाग भेट किया जा रहा है। शीघ्र ही शेष भाग भी क्रमशः भेट कर सकेगे, ऐसी आशा है।

जन्माङ्ग-नक्षत्र-दीपिका मे जातक के सम्पूर्ण फलादेश का नक्षत्रानुसारि विचार किया गया है जो 'नाडीज्योतिष' के अनुसार है। यो आज प्रचलित जातक-फलादेश से इस फलादेश मे विशेषता यह है कि यह और भी सूक्ष्म बन पड़ता है और स्थूलविचार से अशुभ प्रतीत होनेवाला ग्रहराशिकृत फलादेश इस पद्धति से शुभ सिद्ध होता है। इसी तरह स्थूल-विचार से शुभ-फलादेश इस पद्धति से जाचने पर कभी अशुभ भी सिद्ध हो जाता है। इस सम्बन्ध मे हम अधिक न लिखकर सम्मान्य ग्राहकों से ग्रन्थ देखने का ही अनुरोध करेंगे।

इस प्रथम भाग मे चार प्रकरणों मे नक्षत्रविचार, शरीरस्थ ग्रहराश्यादि-विचार तनु और धनभाव तथा उनके योगो के विचार तक का विषय आ जाता है। द्वितीय आदि तीन भागों मे शेष १० भावों का विचार, दशाविचार, कर्मविपाक विचार, योग-विचार और मुहूर्त-विचार किया जायगा। सिवा आवश्यकतानुसार अन्य भी विषयों का समावेश किया

जा सकता है। साराश, इस एक पुस्तक के सहारे नाडीज्योतिष की पद्धति के अनुसार जातक के सम्पूर्ण फलादेश का जिस तरह सकलन हो सकेगा, तदर्थ हम प्रयत्नशील रहेंगे। हमारा यह प्रयत्न कितना सफल है या होगा, यह ज्योतिषप्रेमी पाठकों के निर्णय पर ही निर्भर है। किन्तु इतना अवश्य है कि यदि उन्होंने इसे पूरी उदारता और व्यापकता के साथ अपनाया तो यह लेखक अपने श्रम की आंशिक सार्थकता मानेगा। शीघ्रता आदिवश इसमे जो त्रुटि या कमी हो, कृपालु पाठक हमे निःसंकोच अवश्य सूचित करें, ताकि द्वितीय सस्करण में उन्हें सुधारा जा सके।

इस पुस्तक के सम्पादन, संशोधन आदि कार्य मे न्याय-वेदान्ताचार्य श्रीगोविन्द नरहरि वैजापुरकरजी (सम्पादक दैनिक 'सन्मार्ग', काशी) ने जो आत्मीयतापूर्ण पूर्ण सहयोग दिया तदर्थ उनके आभार मानना उनकी आत्मीयता को न्यून करना होगा। अतः हम उस जगदीश्वर से उनकी उत्तरोत्तर वृद्धि की ही कामना करते हैं।

अन्त मे इस पुस्तक के प्रकाशन में प्रेस के मालिक श्रीराममोहनजी शास्त्री ने जो महान् सहयोग दिया, वास्तव में उसीके फलस्वरूप यह पुस्तक मैं आप लोगों की सेवा में उपस्थित कर सका। अतः उनके जितने आभार माने जायं, थोड़े हैं। इसी तरह दैवज्ञभवन की काशी-शाखा के प्रधान सचालक श्रीमहादेव प्रसादजी कपूर का मैं कितना आभार प्रदर्शित करू जो हमें इस कार्य मे सदा प्रोत्साहित करते रहते हैं। आभारप्रदर्शन के इस प्रसंग मे फोरमैन श्रीरामदुलारे सिंह को भी हम भूल नहीं सकते। उन्हींके उत्साह, शीघ्रता और तत्परता से यह काम इतना शीघ्र बन पड़ा। अन्त में इसके प्रकाशन में सभी ज्ञात-अज्ञात लोगों के आभार मानकर यह निवेदन पूरा कर रहा हूँ।

लेखक

—लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी

प्रकाशक के दो शब्द

दैवज्ञभवन अबतक पूज्य श्रीलक्ष्मीनारायणजी त्रिपाठी द्वारा लिखित तीन ग्रन्थों को प्रकाशितकर उन्हे ग्राहकों की सेवा मे भेट कर चुका है। आज यह चतुर्थ पुष्प (प्रथम भाग) हम आपकी सेवा मे भेट कर रहे है। शेष भाग भी क्रमशः भेट करेंगे। श्रीत्रिपाठीजी ने इन ग्रन्थों के अतिरिक्त रत्नदीपिका, यन्त्रदीपिका, मन्त्रदीपिका आदि अनेक ग्रन्थ लिखे हैं जो अपने अपने विषय के प्रमुख और जनता के लिए विशेष उपयोगी हैं। सामुद्रिक दीपिका (१,२ भाग), पौर्वात्य पाश्चात्य सामुद्रिक-विज्ञान और यह प्रथम भाग—इतने ग्रन्थ तो भवन ने स्वय पूरा भार उठाकर प्रकाशित किये और उसकी खोजकर न केवल भारत के, वरन विदेशों के ज्योतिष प्रेमियो ने भी उन्हे मगाकर उनसे लाभ उठाया। किन्तु देश मे जनसाधारण ने इनसे जितना लाभ उठाना चाहिये, अभी नहीं उठाया है। अतः हम पुनः उनसे अनुरोध करेंगे कि वे राष्ट्रभाषा हिन्दी के भण्डार के इन अमूल्य रत्नों का और भी अधिक उपभोग करें और इस तरह हमे भी आगे के अमूल्य रत्नो के प्रकाशन मे त उत्साहित करे।

इस सम्बन्ध मे हमने एक यह योजना बनायी है है कि दैवज्ञभवन के अबतक प्रकाशित और आगे प्रकाशित होनेवाले सभी ग्रन्थ उसके स्थायी ग्राहकों को पौन मूल्य पर दिये जायं। स्थायी ग्राहक बनने के लिए २) शुल्क एकबार जमा करना पड़ता है हम कृपालु ग्राहकों से निवेदन करेंगे कि वे इसका अधिक से अधिक लाभ उठाये। हमे भी इस योजना से आगे ग्रन्थ के प्रकाशन मे बल और उत्साह मिलेगा। यदि ग्राहकों का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ तो नक्षत्रदीपिका के शेष भाग नियत समय से और भी शीघ्र हम प्रकाशित कर सकेंगे।

प्रकाशक

—प्रभुदयालु त्रिपाठी।

विषयानुक्रमणिका

विषय पृष्ठ

तृतीय प्रकरण

[तनुभाव और उसके योगों का विचार]

विषय	पृष्ठसंख्या

चतुर्थ प्रकरण

[धनभाव और उसके योगों का विचार]

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

जन्मांग-नक्षत्र-दीपिका

मंगलाचरणम्

श्रीकाशिकामुक्तिपुरीप्रभुभ्यां
ताभ्यां नमो दिव्यदिगम्बराभ्याम् ।
मातापितृभ्यां जगतोऽन्नपूर्णा—
विश्वेश्वराभ्यां सुरसेविताभ्याम् ॥१॥
श्रीसङ्कटां सङ्कटकोटिहन्त्रीं
भक्तैकनिघ्नां महिषासुरघ्नीम् ।
सुरासुरस्त्रीजनवन्दनीयां
देवीं मृडानीं शिवशक्तिमीडे ॥२॥
कलौ विशेषेण फलप्रदो यः
सङ्कल्पपूर्तिं कुरुतेऽर्चितः सन् ।
श्रीसत्यनारायणमाशुतोषं
तं सत्यमीशं परिचिन्तयेऽन्तः ॥३॥
यो राशिचक्रे ग्रहमण्डलेऽपि
स्वीयं प्रभुत्वं प्रकटय्य विष्णुः ।
नक्षत्रमालाविमलाखिलाङ्गो
विद्योतते, तं शरणं प्रपद्ये ॥४॥
'मध्यभारत'-भूभागभूषणे हृतदूषणे ।
वसन् 'राजगढे' राज्ये 'नरसिंहगढे' तथा ॥५॥
राज्यज्यौतिषिकः श्रीमद्गुरुदेवपदाश्रितः ।
'त्रिपाठि'कुलजो विप्रो 'लक्ष्मीनारायणा'भिधः ॥६॥
व्योमचन्द्रवियच्चक्षु (२०१०) मिते वैक्रमवत्सरे ।
ज्येष्ठमासे शुक्लपक्षे सोमे दशहरातिथौ ॥७॥
इमां 'जन्माङ्गनक्षत्रदीपिकां' कलयन्नहम् ।
'दैवज्ञभवनस्येद तृतीयं कल्पये सुमम् ॥८॥

विषय-प्रवेश

संसार में कोई वस्तु अकारण नहीं होती। वस्तुमात्र का कोई न कोई कारण अवश्य होता है। अतः ससार का भी कोई कारण अवश्य है। उसी का नाम परब्रह्म है। वही इच्छा करता है कि 'एकोऽहं बहु स्याम्', तब सृष्टि होती है। वही कालपुरुष है जो मन्वन्तर युग से लेकर अहर्गण-तक अनेक भेदों में विभक्त हो ससार को उत्पन्न करता, उसका पालन पोषण करता और अन्त में अपने ही में उसे समा लेता है। इस तरह भारतीय संस्कृति में ब्रह्मस्वरूप काल ही जगदाधार माना गया है। जगत् उसकी उपेक्षाकर क्षणभर भी ठहर नहीं सकता।

मानव इस महाकाल के वर्तमान रूप को तो देखता ही रहता है, किन्तु भूत और भविष्यत् रूप उसकी दृष्टि से परे हैं। बेचारा स्थूलदृष्टि मानव उसे देख नहीं पाता। यद्यपि योगिजन योगज ज्ञान से उसका भी पता पा जाते हैं, फिर भी वह मार्ग सर्वसाधारण के लिए सुगम, सुलभ नहीं। अतएव भारतीय वाङ्मय में एक ज्योतिषमार्ग भी बतलाया गया है। मानव उससे बहुत कुछ भूत-भविष्य समझ सकता है।

इस ज्योतिष का आधार नक्षत्रपुरुष है जो परब्रह्म भगवान् विष्णु का ही अवतार है। आकाश में दृग्गणित से दिखाई पडनेवाले नक्षत्र इसीके विभिन्न अवयव हैं और इन्हींका समूह नक्षत्र-मण्डल है जिसे 'शिशुमारचक्र' कहा गया है। 'विष्णुपुराण' के द्वितीय अंश में इस नक्षत्रपुरुष का विस्तृत वर्णन है। इसी नक्षत्रमण्डल के आधारपर १२ राशियां, १२ मास, ६ ऋतुएँ, २ अयन और १ वर्ष बनता है। मानव की वर्तमान युग की शतवर्ष की आयु में ये ही नक्षत्र मण्डल या चक्र अपने अनेक फेरे लगा जाते हैं। अपने भूत और भविष्य के ज्ञानार्थ यदि हम इन्हीं नक्षत्रों का सूक्ष्म अध्ययन करें तो कोई कारण नहीं कि हम उन्हें न जान लें। 'जन्मागनक्षत्रदीपिका' का यह आरंभ इसी निमित्त किया जा रहा है।

प्रथम प्रकरण

[नक्षत्रपुरुष, शरीरस्थित नक्षत्र, राशियां और उनके स्वामियों का विचार]

नक्षत्रों की उत्पत्ति—भारतीय ज्योतिषशास्त्र मे भगवान् श्रीविष्णु के शरीराङ्गों से अभिजित् सहित अश्विनी आदि २८ नक्षत्रों की उत्पत्ति बतायी गयी है। भगवान् ने उन्हे उत्पन्नकर कृपावश अपने ही शरीर के विभिन्न अङ्गो मे उनके निवासार्थ स्थान भी दिया। उस विष्णुदैवत मूलपुरुष के किस किस अङ्ग से कौन-कौन-सा नक्षत्र उत्पन्न हुआ और उस-उसका उस शरीर मे कहाँ-कहाँ निवास है, यह मुखपृष्ठ के चित्र मे स्पष्ट अंकित है।

नक्षत्रो की स्थिति—उस मूलपुरुष के दोनो चरणो से 'मूल' नक्षत्र की उत्पत्ति हुई है। जहाँ से जो नक्षत्र उत्पन्न हुआ, उसका निवास उसी अङ्ग मे माना गया है। इस तरह (१) मूल नक्षत्र पैरो मे, (२-३) अश्विनी और रोहिणी दोनो जंघाओं में, (४-५) पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा दोनों ऊरू स्थानों मे, (६-७) पूर्वा फाल्गुनी और उत्तरा फाल्गुनी दोनों गुह्य स्थानों मे, (८) कृत्तिका कमर मे, (९-१०) पूर्वा भाद्रपदा और उत्तरा भाद्रपदा दोनो पार्श्वों मे, (११) रेवती कुक्षि मे, (१२) अनुराधा वक्ष:स्थल मे, (१३) धनिष्ठा पृष्ठ मे, (१४) विशाखा दोनों भुजाओं मे, (१५) हस्त दोनो हाथों मे, (१६) पुनर्वसु दोनो हाथों की उंगलियों मे, (१७) आश्लेषा दोनों हाथों के नखो मे (१८) ज्येष्ठा ग्रीवा मे, (१९) श्रवण दोनो कानो मे, (२०) पुष्य मुख मे, (२१) स्वाती दांतों मे, (२२) शतभिषा ओष्ठ मे, (२३) मघा नासिका मे, (२४) मृगशिरा दोनो नेत्रो मे, (२५) चित्रा भाल मे

(२६) भरणी मस्तक मे, (२७) आर्द्रा शिर के केशों मे और (२८) अभिजित् पूर्ण शरीर मे निवास करते हैं।

पूर्णिमान्त चैत्रमास की कृष्णाष्टमी से, जब चन्द्रमा मूल नक्षत्र पर हो, लेकर एक वर्षतक भगवान् विष्णु पैर से शिरतक के नक्षत्रों मे क्रमशः रमण किया करते हैं। उनका प्रभाव प्रत्येक मनुष्य के अङ्गों पर अंशों द्वारा पड़ता है। आचार्य वराहमिहिर ने 'बृहत्संहिता' मे इसका विस्तार-पूर्वक उल्लेख किया है। सबका निष्कर्ष यही है कि मनुष्यशरीररूप पिण्डाण्ड ही विशाल ब्रह्माण्ड की प्रतिमूर्ति है और जितनी शक्तियां विश्व का परिचालन करती हैं, सभी इसी नरदेह मे विद्यमान हैं।

रुद्रकृत 'होराशास्त्र की विवरणी' टीका में भी यह विस्तारपूर्वक वर्णित है कि नक्षत्रचक्र कहीं अन्यत्र नहीं, अपने ही शरीर मे—सूक्ष्म शरीर में—वर्तमान है। योगिजन वहीं से नक्षत्रों की स्थिति का पता पा जाते थे। वहाँ कहा गया है कि मूलाधार मे रवि, स्वाधिष्ठान मे चन्द्र, मणिपूर मे मङ्गल, अनाहत मे बुध, विशुद्ध मे बृहस्पति, आज्ञाचक्र मे शुक्र तथा द्वादशार चक्र मे शनि स्थित है।

'ग्रे' तथा कनिंघम की 'एनाटामी' मे दिये गये मस्तिष्क के चित्र का सूक्ष्म अवलोकन करने पर स्पष्ट दीख पड़ेगा कि वह ४ भागों मे विभक्त है—(१) सम्मुख भाग, (२) पश्चात् भाग, (३) पार्श्वभाग और (४) मध्य भाग। इन चारों में भी ३-३ उपभाग दिखाये गये हैं। इस प्रकार कुल १२ भाग हुए। ये ही १२ राशिया हैं। सम्मुख भाग मे मेष, सिंह और धन अग्नितत्त्वद्योतक राशिया हैं। पश्चात् भाग मे वृषभ, कन्या और मकर पृथ्वीतत्त्वद्योतक राशिया हैं। पार्श्वभाग मे मिथुन, तुला और कुम्भ वायुतत्त्वद्योतक राशिया हैं। और मध्यभाग मे कर्क, वृश्चिक एव मीन जलतत्त्वद्योतक राशियाँ हैं। राशिचक्र मे मेषादि राशियाँ जिस क्रम से स्थापित हैं उनका त्रिकोणसम्बन्ध भी उससे स्पष्ट हो जाता है।

सारांश, अनेक प्रमाणों के आधारपर कहा जा सकता है कि 'यत्पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे' अर्थात् जो शरीर मे है वही ब्रह्माण्ड मे है। यही कारण है कि स्थान-स्थानपर इस मानवशरीर की महत्ता वर्णित है।

मानव-शरीरपर नक्षत्र-स्थिति

विष्णुदैवत मूलपुरुष की तरह साधारण मानवशरीर के विभिन्न अङ्गों मे भी विभिन्न २७ नक्षत्रो की स्थिति कही गयी है जो निम्नलिखित है—(१) कृत्तिका सिर मे, (२) रोहिणी भाल मे, (३) मृगशिरा भौंहों मे, (४) आर्द्रा आँखो मे, (५) पुनर्वसु नाक मे (६) पुष्य चेहरे मे, (७) आश्लेषा कानों मे, (८) मघा होठों मे, (९) पूर्वा फाल्गुनी दाहिने हाथ मे, (१०) उत्तरा फाल्गुनी बाँये हाथ में, (११) हस्त अंगुलियों में, (१२) चित्रा ग्रीवा में, (१३) स्वाती सीने मे, (१४) विशाखा छाती मे, (१५) अनुराधा उदर मे, (१६) ज्येष्ठा आमाशय में, (१७) मूल कोख मे, (१८) पूर्वाषाढ़ा पीठ मे, (१९) उत्तराषाढ़ा रीढ़ मे, (२०) श्रवण कमर, मे, (२१) धनिष्ठा गुदा मे, (२२) शततारका दाहिनी जंघा मे, (२३) पूर्वाभाद्रपदा बाँयी जघा मे, (२४) उत्तरा भाद्रपदा पिंडली मे, (२५) रेवती टखने मे, (२६) अश्विनी पैरों के ऊपरी भाग मे और (२७) भरणी पैरो के तलवे मे स्थित हैं।

नक्षत्रों के गुणभेद और लिङ्गभेद

गुणभेद—कथित २७ नक्षत्र सात्विक, राजस और तामस भेद से तीन प्रकार के हैं। इन्हीं गुणों के कारण जातक के लिए अनिष्ट भी नक्षत्र कभी शुभ तो कभी इष्ट भी नक्षत्र अशुभ हो जाते हैं। सात्विक नक्षत्र ये हैं—पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा, आश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती। राजस नक्षत्र ये हैं—कृत्तिका, उत्तरा फाल्गुनी उत्तराषाढ़ा, रोहिणी, हस्त, श्रवण, भरणी, पूर्वा फाल्गुनी और पूर्वाषाढा। तामस-

नक्षत्र ये है—अश्विनी, मघा, मूल, आर्द्रा, स्वाती, शतभिषा, मृगशिरा, चित्रा, धनिष्ठा, पुष्य, अनुराधा और उत्तरा भाद्रपदा।

लिङ्गभेद—ये ही नक्षत्र पुल्लिङ्ग, स्त्रीलिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग भेद से पुनः तीन प्रकार के कहे गये हैं। पुल्लिङ्ग नक्षत्र ये हैं—अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, अनुराधा, श्रवण पूर्वा भाद्रपदा और उत्तरा भाद्रपदा। स्त्रीलिङ्ग नक्षत्र ये हैं—भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, आर्द्रा आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, चित्रा, स्वाती, विशाखा, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढा उत्तराषाढा, धनिष्ठा और रेवती। नपुंसकलिङ्ग नक्षत्र ये हैं—मृगशिरा, मूल और शतभिषा।

नक्षत्रों के स्वामी

त्रिगुणात्मक और त्रिलिङ्ग इन २७ नक्षत्रों के नौ स्वामी हैं जिन्हें 'ग्रह' कहा जाता है। वे निम्नलिखित हैं—

(१)	केतु	अश्विनी	मघा	मूल।
(२)	शुक्र	भरणी	पूर्वा फाल्गुनी	पूर्वाषाढा।
(३)	सूर्य	कृत्तिका	उत्तरा फाल्गुनी	उत्तराषाढा।
(४)	चन्द्र	रोहिणी	हस्त	श्रवण।
(५)	मंगल	मृगशिरा	चित्रा	धनिष्ठा।
(६)	राहु	आर्द्रा	स्वाती	शतभिषा।
(७)	गुरु	पुनर्वसु	विशाखा	पूर्वाभाद्रपदा।
(८)	शनि	पुष्य	अनुराधा	उत्तरा भाद्रपदा।
(९)	बुध	आश्लेषा	ज्येष्ठा	रेवती।

नक्षत्रों के चरण और राशियाँ

उपर्युक्त २७ नक्षत्रो में प्रत्येक के चार चार चरण माने गये हैं और और प्रत्येक २। नक्षत्रों की निम्नलिखित १२ राशियाँ बनती हैं।

१.	मेष	अश्विनी	भरणी	कृत्तिका १ चरण
२.	वृषभ	कृत्तिका ३ च०	रोहिणी	मृगशिरा २ च०
३.	मिथुन	मृगशिरा २	आर्द्रा	पुनर्वसु ३
४.	कर्क	पुनर्वसु १	पुष्य	आश्लेषा
५.	सिंह	मघा	पूर्वाफाल्गुनी	उत्तरा फाल्गुनी १
६.	कन्या	उत्तरा फाल्गुनी ३	हस्त	चित्रा २
७.	तुला	चित्रा २	स्वाती	विशाखा ३
८.	वृश्चिक	विशाखा १	अनुराधा	ज्येष्ठा
९.	धन	मूल	पूर्वाषाढा	उत्तराषाढा १
१०.	मकर	उत्तराषाढा ३	श्रवण	धनिष्ठा २
११.	कुंभ	धनिष्ठा २	शतभिषा	पूर्वाभाद्रपदा ३
१२.	मीन	पूर्वाभाद्रपदा १	उत्तराभाद्रपदा	रेवती

नक्षत्र-मण्डल विचार

पीछे कहा जा चुका है कि समस्त नक्षत्रमण्डल भगवान् विष्णु का स्वरूप है। इसीका दूसरा नाम 'शिशुमारचक्र' भी है। इस चक्र का वर्णन 'विष्णुपुराण' के द्वितीय अंश में सविस्तार किया गया है। नक्षत्रों के स्वामी नवग्रह और उनके १२ विभागों से १२ राशियों का निर्माण भी दिखाया जा चुका है। अब इन्हीं १२ राशियों के माध्यम से नक्षत्रों का ६० संवत्सरों तक वर्गीकरण बनाया जा रहा है।

ध्यान रहे कि इन नवग्रहों में सूर्य ही मुख्य है। वही वास्तविक ज्योति है और उसीके प्रकाश से सारा विश्व प्रकाशित है। अतः नक्षत्रों के वर्गीकरण में भी इसका महत्त्वपूर्ण हाथ है। उपर्युक्त शिशुमारचक्र की जिस दिशा में सूर्य भगवान् उदित होते हैं उसे पूर्व और जिस दिशा में अस्त होते हैं उसे पश्चिम कहते हैं। इसके दाहिने दक्षिण और बाँयें उत्तर दिशा समझनी चाहिये।

मासविचार—उक्त राशिचक्र के जिस एक खण्ड पर सूर्य उदित होता है वह उस राशि का माना जाता है। राशिचक्र के इन १२ राशिखण्डों में प्रत्येक ३०-३० अंशों का हुआ करता है और सूर्य करीब १-१ दिन में एक-एक अंश लांघता पूरे महीनेभर में एक राशि का भोग करता है। इसे ही 'सौरमास' कहते हैं।

वस्तुतः मास चार प्रकार के कहे गये हैं—(१) चान्द्र मास, (२) सावनमास, (३) सौर मास और (४) नाक्षत्र मास। चान्द्रमास—पहली अमावास्या से दूसरी अमावास्या तक (१५-१५ दिनों के शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष मिलाकर) चान्द्रमास होता है। सावनमास—३० दिनों का सावन मास होता है। सौर मास—ऊपर कथित प्रकार से सूर्य जब एक राशि का भोग करता है तब सौर मास होता है। और नाक्षत्रमास—जब २७ नक्षत्र पूर्ण हो जाते हैं तब नाक्षत्रमास होता है।

पक्ष-तिथि और वार—ऊपर जिस चान्द्रमास का उल्लेख है वह (प्रत्येक) दो खण्डों मे विभक्त है जिन्हें 'पक्ष' कहा जाता है। इनके नाम ये हैं—(१) शुक्ल पक्ष और (२) कृष्ण पक्ष। अमावास्या के बाद के दिन से १५ दिन शुक्ल पक्ष और शुक्ल पक्ष की समाप्ति से १५ दिन कृष्णपक्ष होता है। शुक्ल पक्ष का अन्तिम दिन पूर्णिमा और कृष्णपक्ष का अन्तिम दिन अमावास्या कहलाता है।

इन दोनों पक्षों में प्रत्येक के १५ दिनों को तिथियां कहते हैं जिनके नाम ये हैं—प्रतिपद्, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, पूर्णिमा या अमावास्या।

वार सात हैं जो पीछे कथित ७ ग्रहों के ही प्रतीक हैं। नवग्रहों में राहु-केतु कोई महत्त्व के ग्रह नहीं। वैसे तो उपग्रह मिलाकर ११ ग्रह हैं। वारों के नाम ये हैं—रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार और शनिवार। ये तिथियों के साथ साथ-साथ चलते रहते हैं।

ऋतुविचार—२-२ सौर मासों की एक-एक ऋतु होती है जो सूर्य के पूरे राशिचक्र पर भ्रमण के १ वर्ष में ६ संख्या में विभक्त हैं। उनके नाम और काल निम्नलिखित हैं—(१) वसन्त ऋतु—यह मेष और वृषभ राशिखण्डों पर सूर्य के होने से बनती है जो भारतीय मास चैत्र-वैशाख या आंग्लमास मई-जून में पड़ती है। इसी तरह (२) ग्रीष्म ऋतु—मिथुन और कर्क राशिखण्डों पर सूर्य के होने से बनती है जो क्रमशः ज्येष्ठ आषाढ या जुलाई अगस्त भारतीय एवं आंग्ल मासों में पड़ती है। (३, वर्षाऋतु—सिंह और कन्या के राशिखण्डों पर सूर्य के होने से बनती है जो श्रावण-भाद्रपद भारतीय या सितम्बर-अक्तूबर आंग्ल मासों में पड़ती है। (४) शरद् ऋतु—तुला और वृश्चिक के राशि-खण्डों पर सूर्य के होने से बनती है जो भारतीय मास आश्विन-कार्तिक या आँग्लमास नवम्बर-दिसम्बर में पड़ती है। (५) हेमन्त ऋतु—धन और मकर राशिखण्डों पर सूर्य के होने से बनती है जो मार्गशीर्ष पौष नामक भारतीय या जनवरी-फरवरी आँग्लमासों में पड़ती है और (६) शिशिर ऋतु—कुंभ और मीन राशिखण्डों पर सूर्य होने से बनती है जो माघ-फाल्गुन भारतीय या मार्च-अप्रैल आँग्लमास में पड़ती है।

अयनविचार—सूर्य के पूरे राशिचक्र के भ्रमणकाल को दो भागों में विभक्त करनेपर अयन बनते हैं जो 'उत्तरायण' और 'दक्षिणायण' नाम से कहे जाते हैं। (१) उत्तरायण—जब सूर्य मकरराशि में प्रवेश करता है तब ६ मासों (मिथुन राशिखण्ड का पूरा भोग होनेतक) के लिए उत्तरायण कहाता है। इस बीच उत्तरी ध्रुव में ६ मासों का दिन होता है। (२) दक्षिणायन—इसी तरह जब सूर्य कर्कराशि में प्रवेश करता है तब ६ मासों (धन राशिखण्ड का पूरा भोग होनेतक) के लिए दक्षिणायण कहाता है। इस बीच दक्षिणी ध्रुव में ६ मासों का दिन होता है। इसी तरह सूर्य जब अपने क्रान्तिवृत्त से लेकर उस रेखा पर, जो पृथ्वी के केन्द्र से निकलकर दक्षिणार्ध और उत्तरार्ध दो खण्ड बनाती है, हो तो दोनों

ध्रुवों पर दिन रात बराबर होते हैं। इस तरह सूर्य के पूरे राशिचक्र के भ्रमणकाल का द्विविध वर्गीकरण ही अयन कहलाता है।

ध्यान रहे कि जिस दिन मेष और तुला संक्राति पड़ती है, अर्थात् इन राशियों पर सूर्य आता है, उसी दिन क्रान्तिवृत्त और विषुवत्-वृत्त मिलते हैं, अन्यथा दोनों बराबर नहीं होते। यही कारण है कि मकर से मिथुन तक (माघ से आषाढ तक) सूर्य उत्तरायण और कर्क से धन तक (श्रावण से पौष तक) सूर्य दक्षिणायण कहा जाता है।

संवत्सर-विचार—ऊपर जो चार प्रकार के मास कहे गये हैं उनमे सौर और चान्द्र मासों का योग पॉच वर्ष बाद होता है और फिर पूर्व क्रम से चारों मास चलने लगते हैं। इन ५ वर्षों मे सौरमास के ६० महीने (१२×५=६०), सावन मास के ६१ महीने, चान्द्रमास के ६२ महीने और नाक्षत्र मास के ६७ महीने होते हैं। इन पाँच वर्षों को पॉच विभिन्न 'वत्सर' नामों से कहा गया है। ये नाम निम्नलिखित हैं—(१) संवत्सर, (२) परिवत्सर, (३) इद्वत्सर, (४) अनुवत्सर और (५) वत्सर।

ये पञ्चविध वत्सर ६० वर्षों मे पूरे राशिचक्र का भ्रमणकर पुनः अपने स्थान संवत्सर पर आ जाते हैं। उन ६० संवत्सरों या वर्षों के नाम निम्नलिखित हैं—

(१ प्रभव, (२) विभव, (३) शुक्ल, (४) प्रमोद, (५) प्रजापति, (६) अङ्गिरा, (७) श्रीमुख, (८) भाव, (९) युवा, (१०) धाता, (११) हेमलम्ब, (१२) विलम्ब, (१३) विकारी, (१४) शर्वरी, (१५) प्लव, (१६) शुभकृत्, (१७) शोभाकृत्, (१८) क्रोधी, (१९) विश्वावसु, (२०) पराभव, (२१) ईश्वर, (२२) बहुधान्य, (२३) प्रतापी, (२४) विक्रम, (२५) वृष, (२६) चित्रभानु, (२७) सुभानु, (२८) चारण, (२९) पार्थिव, (३०) व्यय, (३१), प्लवग, (३२) विलक, (३३) सौम्य, (३४) साधारण, (३५) विरोधकृत्, (३६) परिधावी, (३७) प्रमादी,

(३८) आनन्द, (३९) राक्षस, ४० अनल, (४१) सर्वजित, (४२) सर्वधारी, (४३) विरोधो, (४४) विकृति, (४५) खर, (४६) नन्दन, (४७) विजय, (४८) जय, (४९) मन्मथ, (५०) दुर्मुख, (५१) पिंगल, (५२) कलयुगी, (५३) सिद्धार्थी, (५४) रौद्री, (५५) दुर्मति, (५६) दुन्दुभि, (५७) रुधिरोद्गारी, (५८) रक्ता, (५९) क्रोधन और (६०) अक्षय।

इस तरह नक्षत्रमण्डल का विचार पूरा होता है। प्रसगतः यहां शरीरस्थित षट्चक्रों और वहां जन्मकालीन विभिन्न नक्षत्रों की स्थिति से प्राप्त की जानेवाली सिद्धियों के सम्बन्ध मे भी संक्षिप्त प्रकाश डाला जा रहा है।

मनुष्य के शरीरांग स्थित षट्चक्र विचार

आध्यात्मिक नक्षत्रविचार—जिस प्रकार भूमण्डप का आधार मेरुपर्वत वर्णित है, उसी प्रकार मनुष्यशरीर का आधार मेरुदण्ड (कृत्तिका नक्षत्र) है। मेरुदड तैंतीस अस्थिखडो के योग से बना है। (सम्भव है, इस तैतीस संख्या का सम्बन्ध तैतीस कोटि देवताओं से हो।) प्रजापति, इन्द्र, अष्टावसु, द्वादश आदित्य, और एकादश रुद्र मिलकर तैंतीस अस्थियों के स्वामी होते हैं। भीतर से यह मेरुदड खोखला है। इसका निचला भाग नुकीला और छोटा है। इस नुकीले स्थान के आसपास का भाग "कन्द" कहलाता है। इसी कन्द में जगदाधारभूत महाशक्ति की प्रतिमूर्ति कुडलिनी का निवास है, उसीको कृत्तिका नक्षत्र कहते हैं। मानव शरीर मे बहत्तर हजार नाडियो की स्थिति कही गयी है। इनमे से मुख्य नाडियो की सख्या १४ चौदह है। वे ही चौदह लोक हैं। उनमे से भी प्रधान तीन हैं—इडा, पिंगला तथा सुषुम्णा। इडा नाडी मेरुदड के बाहर बायी ओर से और पिंगला दाहिनी ओर से लिपटी है।

सुषुम्णा नाडी मेरुदंड के भीतर कृत्तिका कन्द भाग से आरम्भ होकर कपाल में स्थित सहस्रदल कमल तक जाती है। इसीके भीतर वज्रा, चित्रिणी तथा ब्रह्म ये तीन नाडिया हैं, जो तीन तीन नक्षत्रों द्वारा सप्तलोको मे स्थित हैं। योगक्रियाओं द्वारा जागरित कुडलिनीशक्ति ब्रह्मनाडी के द्वारा कपालस्थित ब्रह्मरन्ध्रतक जाकर पुन लौट आती है।

मेरुदण्ड के भीतर ब्रह्मनाडी में पिरोये छः कमलों की कल्पना की जाती है। ये छः कमल शरीर के जिन अवयवों के सामने मेरुदड के भीतर स्थित हैं उन्हीं अवयवों के नामसे नक्षत्रों सहित पुकारे जाते हैं।

(१) मूलाधार चक्र—इसमें निम्नलिखित सात नक्षत्र स्थित हैं—मूल, अश्विनी, रोहणी, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तर फाल्गुनी। इस चक्र की स्थिति रीढ़ की हड्डी के नीचे कन्द-प्रदेश से लगे गुदा और लिंग के मध्यभाग मे है। इस चक्र का कमल रक्तवर्ण और चार दलवाला है। इन दलोंपर व, सं, ष, शं, अक्षरों की स्थिति मानी गयी है। इसका यत्र पृथ्वीतत्वका द्योतक है जो चतुष्कोण है। यन्त्र का रग पीला और बीज 'ल' है। बीज का वाहन ऐरावत हाथी है। यन्त्र के देव और शक्ति ब्रह्मा और डाकिनी है। इस यन्त्र के मध्य में स्वयभू लिंग है जिसके चारों ओर साढे तीन फेरे में लिपटी सर्पाकार अपनी पोंछ अपने मुख मे दबाये कुंडलिनी शक्ति विराजमान है। योगक्रियाओं से जागरित होकर वह शक्ति बिजली के समान मेरुदण्ड के भीतर ब्रह्मनाडी मे प्रविष्ट होकर ऊपर को चलती है। जिस मनुष्य के उपर्युक्त नक्षत्र इसी चक्र मे जन्म समय में पड़े हों, वह व्यक्ति, मनुष्यों में श्रेष्ठ, सर्वविद्यासम्पन्न, विनोदी, नीरोग, आनन्दी, काव्यप्रबन्ध में समर्थ और मूलाधार चक्रको सिद्ध कर लेता है।

(२) स्वाधिष्ठान चक्र—इस चक्रमें निम्नलिखित चार नक्षत्र स्थित हैं—कृत्तिका, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तरा भाद्रपदा और रेवती। इसकी स्थिति लिंगस्थान के ऊपर है। इसका कमल सिन्दूर वर्ण और छः

दलोंवाला है। यह जलतत्व का द्योतक है जो अर्द्धचन्द्राकार है। इस यन्त्र का रंग चन्द्रवत् शुभ्र है। बीज "वं" और बीज का वाहन है मकर। देव-देवी विष्णु और राकिनी शक्ति है। जिस मनुष्य का जन्म-नक्षत्र इसी चक्र पर पड़े वह निरहंकार, योगियों में श्रेष्ठ, मोहरहित और गद्यपद्य की रचना में समर्थ होता तथा इस चक्र को सिद्ध कर लेता है।

(३) मणिपूर चक्र—इस चक्र में निम्नलिखित चार नक्षत्र स्थित हैं—अनुराधा, धनिष्ठा, विशाखा और हस्त। इसकी स्थिति नाभि-प्रदेश के सामने मेरुदण्ड के भीतर है। इसका कमल नीलवर्ण और दश-दलों का है। इन दलों पर डं, ढं, णं, तं, थं, दं, धं, नं, पं, फं, अक्षरों की स्थिति मानी गयी है। इस चक्र का यन्त्र त्रिकोण है जो अग्नितत्व का द्योतक है। इसके तीनो पार्श्व में छींट के समान तीन स्वस्तिक हैं। यन्त्र का रंग बालरवि सदृश है। देव देवी वृद्ध रुद्र तथा लाकिनी शक्ति है। यन्त्रका बीज "रं" है। इस चक्र के उक्त नक्षत्रों में जन्म लेनेवाला संहार-पालन में समर्थ और वचनसिद्ध होता है। उसकी जिह्वा पर सरस्वती निवास करती है। वह रचना में चतुर होता है।

(४) अनाहत चक्र—इस चक्र में निम्नलिखित चार नक्षत्र स्थित हैं—पुनर्वसु, आश्लेषा, ज्येष्ठा और श्रवण। इसकी स्थिति हृदय प्रदेश के सामने है। यह चक्र अरुण वर्ण के द्वादशदल कमल से युक्त है। इन दलों पर कं, खं, गं, घं, ङं, चं, छं, जं, झं, ञं, टं, ठं, अक्षर स्थित हैं। चक्र का यन्त्र धूम्रवर्ण षट्कोण है जो वायुतत्वका सूचक है। यन्त्र का बीज "यं" और वाहन मृग है। देव देवी ईशान रुद्र तथा काकिणी हैं। इस चक्र के मध्य में शक्ति त्रिकोण है जिसमें बिजली का प्रकाश व्याप्त है। इस त्रिकोण से सम्बद्ध "बाण" नामक स्वर्णकान्तिमय शिवलिंग है, जिसके ऊपर एक छिद्र है और छिद्र से लगा अष्टदल 'हृत्पुण्डरीक' नामक कमल है। इसी हृत्पुण्डरीक में उपास्य देवता का ध्यान किया जाता है। इस चक्र के नक्षत्रों में जन्म लेनेवाला मनुष्य ईशत्वसिद्धि-

प्राप्त, योगीश्वर, ज्ञानवान, जितेन्द्रिय, काव्यशक्तिसम्पन्न और परकायप्रवेश मे समर्थ होता तथा इस चक्र की सिद्धि को प्राप्त करता है।

(५) विशुद्ध चक्र—इस चक्र मे निम्नलिखित चार नक्षत्र स्थित हैं—पुष्य, स्वाती, शतभिषा और मघा। इसकी स्थिति कण्ठप्रदेश मे है। इसका कमल सुवर्ण और सोलह दलोंवाला है। इन दलोंपर धूम्र, अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ, लॄ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः स्वरों की स्थिति है। चक्र का यन्त्र पूर्ण चन्द्राकार है और पूर्णचन्द्र की प्रभा से देदीप्यमान है जो शून्य या आकाशतत्व का द्योतक है। यन्त्र का बीज "ह" है और बीज का वाहन हस्ती है। देव-देवी पञ्चवक्त्र सदाशिव और शाकिनी है। इस चक्र के नक्षत्रों मे जन्म लेनेवाला काव्यरचना में समर्थ, ज्ञानवान, उत्तम वक्ता, शान्तचित्त, त्रिकालदर्शी सर्वहितकारी, नीरोग, चिरजीवी और तेजस्वी होकर इस चक्र की सिद्धि पाता है।

(६) आज्ञा-चक्र—इसमे निम्नलिखित चार नक्षत्र स्थित हैं—मृगशिरा, चित्रा, भरणी और आर्द्रा। इसकी स्थिति भ्रूमध्य के सामने मेरुदण्ड के भीतर ब्रह्मनाडी में है। इसका कमल दो दलवाला और और जो श्वेत वर्ण है। इन दलों पर ह क्ष, नामक अर्द्धनारीश्वर का लिंग है महत्तत्व का स्थान है। यन्त्र का बीज "ॐ" प्रणव है और बीज का वाहन नाद है। इसके ऊपर बिन्दु भी स्थित है। देव-देवी इतर लिंग और हाकिनी शक्ति है। इसकी सिद्धि से वाक्सिद्धि होती है।

उपर्युक्त छः चक्रो के बाद मेरुदण्ड के ऊपरी सिरेपर अभिजित् नक्षत्र से स्थित पूर्णगुरु सहस्र दलवाला सहस्रार चक्र है जहाँ परम शिव विराजमान है। इसके हजार दलों पर बीस-बीस बार प्रत्येक स्वर व्यञ्जनों की स्थिति मानी गयी है। परम शिव से कुण्डलिनी का संयोग; लयभोग का ध्येय है। विषय अत्यन्त गहन है। मूल पुरुष के शरीरांग नक्षत्रो को समझकर डिम्भचक्र द्वारा निर्णय कर लेना चाहिये। डिंभचक्र की क्रिया "सामुद्रिक-दीपिका" के प्रथम भाग मे बतलायी गयी है।

जब कृत्तिका नक्षत्र जागरित होकर सब चक्रो को पार करके चित्रा नक्षत्र में प्रवेश करता है तब उसका नाम "मारुत" होता है। इसका अनुभव योगियो को ही हो सकता है। इसके जागरित होनेपर जीव स्वयं ही बीजरूप को प्राप्त होकर सुखरूप हो जाता है। परमार्थ साधन मे नक्षत्रो का ज्ञान एक ऐसा साधन है जिससे आध्यात्मिक काम के साथ साधक को भौतिक लाभ भी हो सकता है। यह नक्षत्र पुरुष परमात्मा के ज्ञान प्राप्त करने का सरल उपाय है।

इस तरह नक्षत्रपुरुष और नक्षत्रमण्डल का विवेचन पूरा हो गया। अब शरीर के विभिन्न अगो पर राशियो एवं उनके ग्रहो का विचार किया जायगा।

शरीरांगस्थितर राशियाँ और उनके प्रभाव

जिस तरह मानवशरीरपर नक्षत्र रहते हैं उसी तरह राशियाँ भी विद्यमान हैं। वे अपनी नियत डिग्रियो या अंशोतक उस अङ्ग पर प्रभाव डालती हैं। नीचे कथित बारह राशियों की शरीर के विभिन्न अङ्गोपर स्थिति और उनके प्रभाव का विस्तृत विवेचन किया जा रहा है।

(१) मेष—यह राशि डिग्री १ से ३० तक सिरपर रहती और उतनी ही डिग्री तक सिरपर अपना प्रभाव डालती है। अंग्रेजी मे इसे 'एरीज' कहते हैं। इन राशि मे ४ घटी और १५ पल होते है। यह विषम राशि कहलाती है। इसकी चर और पुल्लिङ्ग सज्ञा है और स्वामी मंगल है। सूर्य ३० दिन, ५५ घटी और ३३ पल रहता है।

(२) वृष—यह राशि डिग्री ३० से ६० तक चेहरेपर रहती और उतनी ही डिग्री चेहरेपर प्रभाव डालती है। अग्रेजी मे इसे 'टारस' कहते हैं। यह राशि ४ घटी ४५ पल की होती है। यह समराशि कहलाती है और इसका स्वामी शुक्र है। इसकी स्थिर और स्त्रीलिङ्ग सज्ञा है। सूर्य इस राशिपर ३१ दिन २४ घटी और ५६ पल रहता है।

(३) मिथुन—यह राशि डिग्री ६० से ९० तक दोनों कन्धों पर रहती है। अंग्रेजी में इसे 'जैमिनी' कहते हैं। यह राशि ५ घटी और १५ पल की होती है। यह विषम राशि कहलाती है और इसका स्वामी बुध है। यह द्विस्वभाव और पुल्लिङ्ग संज्ञक है। इस पर सूर्य ३१ दिन, ३७ घटी और ३२ पल रहता है।

(४) कर्क—यह राशि डिग्री ९० से १२० तक सीने (छाती) पर रहती और उतनी ही डिग्री छाती पर प्रभाव डालती है। अंग्रेजी में इसे 'केन्सर' कहते हैं। यह राशि ५ घटी और ३० पल की होती है। यह समराशि कहलाती है। इसका स्वामी चन्द्र है। इसकी चर संज्ञा और स्त्रीलिङ्ग है। इसपर सूर्य ३१ दिन, २२ घटी और ३५ पल रहता है।

(५) सिंह—यह राशि डिग्री १२० से १५० तक हृदयपर रहती और उतनी ही डिग्री उसपर प्रभाव डालती है। अंग्रेजी में इसे 'लीओ' कहते हैं। यह राशि ५ घटी और १५ पलकी होती है। यह विषमराशि कहलाती है। इसका स्वामी सूर्य है। इसकी स्थिर संज्ञा और पुल्लिङ्ग है। इसपर सूर्य ३१ दिन, २ घटी और ५२ पल रहता है।

(६) कन्या—यह राशि डिग्री १५० से १८० तक पेट आमाशय पर रहती और उतनी ही डिग्री तक उस पर प्रभाव डालती है। अंग्रेजीमें इसे 'वीर्गो' कहते हैं। यह राशि ५ घटी और ४ पलकी होती है। यह समराशि कहलाती है और इसका स्वामी बुध है। इसकी द्विस्वभाव संज्ञा और स्त्रीलिङ्ग है। इस पर सूर्य ३० दिन, २९ घटी और ४ पल रहता है।

(७) तुला—यह राशि डिग्री १८० से २१० तक पेट पर रहती और उतनी ही डिग्री तक उसपर प्रभाव डालती है। अंग्रेजीमे इसे 'लीवरा' कहते हैं। यह राशि ५ घटी १४ पलकी होती है। इसे विषमराशि कहते हैं। इसका स्वामी शुक्र है। इसकी चर संज्ञा और पुल्लिङ्ग है। इसपर सूर्य २९ दिन, ५७ और घटी २५ पल रहता है।

(८) वृश्चिक—यह राशि डिग्री २१० से २४० तक पीठपर रहती

और उतनी ही डिग्री पीठ पर प्रभाव डालती है। अंग्रेजीमें इसे 'स्कार्पिओ' कहते हैं। यह राशि ५ घटी और १५ पल होती है। यह समराशि कहलाती है। इसकी स्थिरसज्ञा और स्त्रीलिङ्ग है। इस पर सूर्य २६ दिन २७ घटी और २६ पल रहता है।

(६) धनु—यह राशि डिग्री २४० से २७० तक जंघा पर रहती और उतनी ही डिग्री उसपर प्रभाव डालती है। अग्रेजीमें इसे 'सेगीटेरीअस' कहते है। यह ५ घटी और ३० पलकी होती है। यह विषम राशि कहलाती है। इसका स्वामी गुरु है। यह पुल्लिङ्ग और द्विस्वभाव संज्ञक होती है। इसपर सूर्य २६ दिन, १५ घटी और ३ पल रहता है।

(१०) मकर—यह राशि डिग्री २७० से ३०० तक घुटनो पर रहती और उतनी ही डिग्री तक उसपर प्रभाव डालती है। अंग्रेजीमें इसे 'केप्रीकोर्न' कहते हैं। यह ५ घटी और १५ पल की होती है। यह समराशि कहलाती है और इसका स्वामी शनि है। इसकी स्त्रीलिङ्ग और चर संज्ञा है। इसपर सूर्य २६ दिन २४ घटी रहता है।

(११) कुम्भ—यह राशि डिग्री ३०० से ३३० तक पैरो पर रहती और उतनी ही डिग्री तक उसपर प्रभाव डालती है। अंग्रेजी मे इसे 'एक्यूरीअस' कहते हैं। यह ४ घटी और ४५ पल की होती है। यह विपमराशि कहलाती है और इसका स्वामी शनि है। इसकी स्थिर संज्ञा और पुल्लिङ्ग है। इसपर सूर्य २६ दिन, ४६ घटी और ४३ पल रहता है।

(१२) मीन—यह राशि डिग्री ३३० से ३६० तक पादतल पर रहती और उतनी ही डिग्री उसपर प्रभाव डालती है। अग्रेजी मे इसे 'पीसेल' कहते है। यह ४ घटी और १५ पल की होती है। यह समराशि कहलाती है। इसका स्वामी गुरु है। इसकी द्विस्वभाव सज्ञा और स्त्रीलिङ्ग है। इसपर सूर्य ३० दिन, २३ घटी और ३१ पल रहता है।

शरीरांगस्थित ग्रह और उनके प्रभाव

जब शरीरपर राशिया मानी गयीं तब उनके स्वामी ग्रहों की भी वहाँ स्थिति अर्थात् सिद्ध हो जाती है। अतएव अब कौन-सा ग्रह शरीर के किस अङ्ग पर अधिकार रखता है और उसका वहाँ कैसा प्रभाव पड़ता है, जो उसकी विभिन्न अवस्थाओं पर निर्भर है, यह और साथ ही ग्रहसम्बन्धी अन्य भी आवश्यक जानकारी पर प्रकाश डाला जा रहा है।

(१) मंगल—इसका सिरपर अधिकार है। यह एक राशि पर डेढ मास रहता है। इसके अगारक, कुज, भौम आदि भी नाम हैं। अंग्रेजी मे इसे 'मार्स' कहते हैं। यह मेष और वृश्चिक राशि का स्वामी होता है, जिनमे वृश्चिक पर विशेष बली माना जाता है। इसके नक्षत्र मृगशिरा, चित्रा और धनिष्ठा है। यह पुल्लिङ्गी और तामस ग्रह है। इसका उच्च स्थान मकर और नीच स्थान कर्क है। मगल की मित्र राशिया सिंह, धन और मीन हैं और शत्रु राशिया कन्या तथा मिथुन। यह गुरु के साथ सात्विक और सूर्य के साथ राजस व्यवहार रखता है, बुध इसका शत्रु है। मगल पूर्ण दृष्टि से चौथे और आठवें भाव को देखता है। इसकी दैनिक गति ४६ कला और १८ विकला है। स्टैण्डर्ड समय के अनुसार इसकी २४ घण्टा, २६ मिनट और २१ सेकेण्ड दैनिक गति है। मगल पृथ्वी से १४ करोड़ और २० लाख मील की दूरी पर है। इसका व्यास १२॥ हजार है। इसे राशिचक्र के पूर्ण भ्रमण मे ६८६ दिन, ५८ घटी, ९ पल और १७ विपल लगते हैं। मगल की महादशा ७ वर्ष की होती है।

विभिन्न स्थितियो के अनुसार मगल ईमानदारी, जमींदारी, रोग, आघात, बड़े भाई की आकस्मिक मृत्यु, घात (एक्सिडेण्ट), गरीबी और शूरता का कारक है। राजस स्वभाव के होने से सूर्यनक्षत्र (कृत्तिका, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा), बुधनक्षत्र (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती)

या राहुनक्षत्र (आर्द्रा, स्वाती, शततारका) पर मंगल होनेपर वह अत्युत्तम फल देता है।

(२) शुक्र—इसका चेहरे पर अधिकार रहता है। इसकी एक राशि पर १॥ मास स्थिति होती है। इसके अन्य नाम भृगु, सित आदि है। अंग्रेजी मे इसे 'वेनस' कहते हैं। यह वृष और तुला का स्वामी है जिनमे तुला पर विशेष बली होता है। इसके अपने नक्षत्र भरणी, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाषाढा हैं। यह स्त्रीलिङ्गी और राजसगुणवाला है। इसका उच्च स्थान मीन और नीच स्थान कन्या है। शुक्र की मित्र राशियां धन, मकर और शत्रु राशिया कर्क एवं सिंह हैं। इसका बुध के साथ सात्विक और शनि एव राहु के साथ तामस व्यवहार रहता है। चन्द्र, सूर्य और मंगल से इसका शत्रुत्व है। शुक्र सातवें भाव पर पूर्ण दृष्टि रखता है। शुक्र की दैनिक गति ७३ कला और ७ विकला या २३ घण्टा, २१ मिनट और ७ सेकेण्ड होती होती है। यह पृथ्वी से ६ करोड़ ८० लाख मील दूर है और इसका व्यास ७ हजार ७ सौ मील का है। शुक्रग्रह २२७ वर्ष मे क्रमशः उसी तिथि, मास, दिन, अंशादि पर भ्रमण कर आता है। शुक्र की महादशा २० वर्ष की होती है।

विभिन्न स्थितियो के अनुसार शुक्रग्रह विवाह या तत्सम्बन्धी कार्य, विलास आदि सुख, सगीतनिपुणता, कलाप्रियता, कोषाध्यक्षता, यानाध्यक्षता, जवेरी, प्रमेह रोग आदि का कारक है। मिथुन, कन्या, मकर और कुभ लग्नों मे यह योगकारक होता है। राजसस्वभाव होने से यह बुधनक्षत्र (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती, सूर्यनक्षत्र (कृत्तिका, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा) और राहुनक्षत्र (आर्द्रा, स्वाती, शतभिषा) के १, २, ३ चरणों पर होने से अच्छा फल देता है। गुरुनक्षत्र (पुनर्वसु, चित्रा, पूर्वाभाद्रपदा) पर स्थित होकर यह सात्विक फल देता है। अपने नक्षत्र (भरणी, पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढा) और मगलनक्षत्र (मृगशिरा, चित्रा, धनिष्ठा) पर होने से यह तामस स्वभाव के कारण अशुभ फलप्रद है।

(३) बुध—इसका कन्धे और गर्दन (ग्रीवा) पर अधिकार रहता है। यह एक राशि पर १ मास रहता है। इसका दूसरा नाम सौम्य है। अंग्रेजी मे इसे 'मर्करी' कहते हैं। बुध मिथुन और कन्या का स्वामी है जिनमें मिथुन पर विशेष वली होता है। इसके अपने नक्षत्र आश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती हैं। यह नपुसकलिङ्गी और सात्विक गुणवाला है। इसका उच्च स्थान कन्या और नीच स्थान मीन है। बुध की मित्र राशियाँ वृष, सिंह एव तुला और शत्रु राशि कर्क है। इसका शुक्र के साथ राजस व्यवहार है और चन्द्रग्रह शत्रु है। इसकी सातवें भावपर पूर्ण दृष्टि रहती है। बुध की दैनिक गति २४५ कला और ३२ विकला या २४ घण्टा, ५ मिनट और १८ सेकेण्ड है। यह पृथ्वी से ३ करोड़ ७० लाख मील दूर है और इसका व्यास ३ हजार १ सौ ४० मील का है। इसे राशिचक्र के पूर्ण भ्रमण मे ३६१ दिन १५ घटी, ३१ पल और ३० विपल लगते हैं। बुध की महादशा १७ वर्ष की होती है।

विभिन्न स्थितियों के अनुसार बुधग्रह मुनीमी, वेद-पुराण और ज्योतिष का अध्ययन, पितृव्य (चाचा), साक्षीदान, राजकुमार, व्यापार और कुष्ठ-सग्रहणी रोगो का कारक है। गुरुनक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा) पर स्थित होकर यह सात्विक फलप्रद है। अपने नक्षत्र (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती) और चन्द्रनक्षत्र (रोहिणी, हस्त, श्रवण) पर यह श्रेष्ठ होता है। राजस गुणवाले नक्षत्रों मे शुक्रनक्षत्र (भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा) पर स्थित होकर यह मिश्रित फलप्रद होता है। तामस गुणवाले राहुनक्षत्र (आर्द्रा, स्वाती, शतभिषा), शनिनक्षत्र (पुष्य, अनुराधा, उत्तरा भाद्रपदा), मगलनक्षत्र (मृगशिरा, चित्रा, धनिष्ठा), केतुनक्षत्र (अश्विनी, मघा, मूल) पर बुधग्रह होने पर वह अशुभप्रद होता है।

(४) चन्द्र—इसका सीनेपर अधिकार रहता है। यह एक राशि पर २। दिन रहता है। इसका दूसरा नाम सोम है। अंग्रेजी मे इसे 'मून'

कहते हैं। यह कर्कराशि का स्वामी है। चन्द्र के अपने नक्षत्र रोहिणी, हस्त और श्रवण हैं। यह स्त्रीलिङ्गी और राजसगुणवाला है। इसका उच्च स्थान वृष और नीच स्थान वृश्चिक है। चन्द्र की मित्र राशिया मिथुन, सिंह तथा कन्या है और शत्रुराशि कोई नहीं। चन्द्र का गुरु के साथ सात्विक और सूर्य के साथ राजस व्यवहार होता है। राहु, शनि और केतु के साथ शत्रुता है। चन्द्र सातवे भाव को पूर्ण दृष्टि से देखता है। चन्द्र की दैनिक गति ७९० कला और १४ विकला है और वार्षिक गति ८७ दिन, ७ घण्टा और ४० मिनट है। यह पृथ्वी से २ लाख ३७ हजार ८ सौ ४० मील दूर है और इसका व्यास २ हजार १ सौ ५२ मील का है। इसे राशिचक्र के पूर्ण भ्रमण मे २७ दिन, १९ घटी, १७ पल और ४२ विपल लगते हैं। चन्द्रमहादशा १० वर्ष की होती है।

विभिन्न स्थितियो के अनुसार चन्द्रग्रह मन और तत्सम्बन्धी कार्य, सुगन्धित द्रव्य, पानी, माता, आदर-सम्मान, श्रीसम्पन्नता, एकान्तप्रियता, सर्दी-जुखाम, चर्मरोग और हृदयरोग का कारक है। मेष, तुला वृश्चिक और मीन लग्नो मे यह योगकारक होता है। चन्द्र अपने नक्षत्र (रोहिणी, हस्त, श्रवण) और गुरुनक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा) पर राजस स्वभाव होने से बहुत अच्छा फल देता है। सूर्यनक्षत्र (कृत्तिका, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा) और बुधनक्षत्र (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती) पर सात्विक स्वभाव होनेसे अच्छा फल देता है।

(५) सूर्य—इसका आमाशय और पेट पर अधिकार है। यह एक राशि पर एक मास रहता है। इसका अन्य नाम आदित्य है। अग्रेजी मे इसे 'सन' कहते हैं। यह सिंहराशि का स्वामी है। सूर्य के अपने नक्षत्र कृत्तिका, उत्तरा फाल्गुनी और उत्तराषाढा हैं। यह पुल्लिङ्गी और राजसगुणवाला है। इसका उच्चस्थान मेष और नीच स्थान तुला है। सूर्य की मित्र राशिया वृश्चिक, धनु, कर्क और मीन है तथा शत्रुराशिया वृषभ, मकर और कुम्भ है। सूर्य का गुरु के साथ सात्विक, चन्द्र के साथ राजस और

मगल के साथ तामस व्यवहार है। शनि, शुक्र, राहु और केतु के साथ इसकी शत्रुता है। यह सातवें भाव पर पूर्णदृष्टि से देखता है। सूर्य की दैनिक गति ५६ कला, ८ विकला है। सूर्य पृथ्वी से ६ करोड ५६ लाख मील दूर है और इसका व्यास ६२ हजार मील दूर है। इसके राशिचक्र के पूर्ण भ्रमण का काल ३६५ दिन, १५ घटी, ३१ पल और ३१ विपल है। सूर्यमहादशा ६ वर्ष की होती है।

विभिन्न स्थितियों के अनुमार सूर्य आत्मसिद्धि, पिता, जगल और रेगिस्तानवास, सिरदर्द और मानसिक चिन्ता का कारक है। यह मेष, वृश्चिक एव धन लग्नों मे योगकारक है। तामस स्वभाव होने से सूर्य मगलनक्षत्र (मृगशिरा, चित्रा धनिष्ठा), केतुनक्षत्र (अश्विनी, मघा, मूल), शनिनक्षत्र (पुष्य, अनुराधा, उत्तराभाद्रपदा) और राहुनक्षत्र (आर्द्रा, स्वाती, शतभिषा) पर रहते अनिष्ट फलप्रद है। राजसस्वभाव होने से चन्द्रनक्षत्र (रोहिणी, हस्त, श्रवण) और गुरुनक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा) पर रहते यह श्रेष्ठ फलप्रद है। सात्विक स्वभाव होने से सूर्य अपने नक्षत्र (कृत्तिका, उतराफाल्गुनी, उत्तराषाढा) एवं बुधनक्षत्र (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती) पर रहते श्रेष्ठ फलप्रद कहा गया है।

(६) गुरु—इसका मूत्राशय पर अधिकार रहता है। यह एक राशि पर एक वर्ष रहता है। इसका दूसरा नाम बृहस्पति है। अंग्रेजी में इसे 'जुपिटर' कहते है। यह धनु और मीन राशि का स्वामी है जिनमें धनु मे विशेष बली होता है। गुरु के अपने नक्षत्र पुनर्वसु, विशाखा और पूर्वा भाद्रपदा हैं। यह पुल्लिङ्गी और राजसस्वभाववाला है। इसका उच्च स्थान कर्क और नीच स्थान मकर है। गुरु की मित्र राशिया मेष, सिंह, कन्या और वृश्चिक हैं तथा शत्रु राशिया वृषभ, मिथुन और तुला हैं। गुरु का सूर्य के साथ सात्विक, चन्द्र से राजस और मगल से तामस व्यवहार है। बुध और शुक्र से शत्रुत्व है। यह पञ्चम एव नवम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता है। गुरु की दैनिक गति १४ कला, ४६ विकला या

६ घण्टा और ५५ सेकेण्ड है। गुरु पृथ्वी से ४८ करोड़ ५० लाख मील दूर है और इसका व्यास २ लाख ७५ हजार मील है। इसका राशिचक्र का भ्रमण ११ वर्ष, १० मास, १५ दिन, ३६ घटी और ८ पल पर पूरा होता है। गुरु ग्रह ८३ वर्षों में अपनी गति से चलकर फिर प्रथम वर्ष में ही परिवर्तित होता है। अर्थात् उसी स्थान, नक्षत्र और राशि पर भ्रमण करता है। गुरुमहादशा १६ वर्ष की होती है।

विभिन्न स्थितियो के अनुसार गुरु सन्तानसुख, पवित्रव्यवहार, इन्द्रिय-जय, राज्य-मानलाभ और कीर्तिकारक है। मेष, कर्क, सिंह, वृश्चिक और मीन लग्नों मे यह योगकारक है। सात्विक स्वभाव होने से गुरु सूर्यनक्षत्र (कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा) पर होने से उत्तम फल; राजस स्वभाव होने से अपने नक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा) मे श्रेष्ठ फलप्रद है और तामस स्वभाव होने से राहुनक्षत्र (आर्द्रा, स्वाती, शत-भिषा) पर रहते अनिष्ट फलप्रद है।

(७) शनि—इसका जघाओं पर अधिकार रहता है। यह एक राशि पर २॥ वर्ष रहता है। इसके नाम मन्द, सौरि हैं। अग्रेजी मे इसे 'सेटर्न' कहा जाता है। यह मकर और कुम्भ का स्वामी है जिनमे मकर पर अधिक बली है। शनि के अपने नक्षत्र पुष्य, अनुराधा और उत्तरा भाद्रपदा है। यह नपुसकलिङ्गी और तामस स्वभाववाला है। इसका उच्च स्थान तुला और नीच स्थान मेष है। शनि की मित्र राशियां वृष और मिथुन है और शत्रु राशिया कर्क, सिंह और वृश्चिक। शनि का बुध के साथ सात्विक और शुक्र के साथ राजस व्यवहार है। इसका सूर्य और चन्द्र से शत्रुत्व है। यह तीसरे और दसवें भाव को पूर्ण दृष्टि से देखता है। शनि की दैनिक गति ८ कला ५ विकला या १० घण्टा १६ मिनट है। यह पृथ्वी से ८९ करोड़ मील दूर है और इसका व्यास २॥ लाख मील का है। इसका राशि-चक्र के भ्रमण का पूर्णकाल २९ वर्ष, ५ मास, १७ दिन, १२ घटी और ३० पल होता है। शनिमहादशा १९ वर्ष की होती है।

विभिन्न स्थितियों के अनुसार शनि आयुवृद्धि, चौर्यकर्म, द्रव्य की कमी, बन्धन, शत्रुता, राजभय, बाजुओं में पीडा, गठिया एवं वायु-सम्बन्धी रोगों का कारक है। वृषभ और तुला लग्न मे यह योगकारक है। सात्विक स्वभाव होने से यह केतुनक्षत्र (अश्विनी, मघा, मूल) और गुरुनक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा) पर रहते उत्तम फल तथा चन्द्रनक्षत्र (रोहिणी, हस्त, श्रवण) पर रहते मिश्रित फल देता है। बुधनक्षत्र (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती) पर रहते सात्विक स्वभाव के मिश्रित फल देता है। शनि अपने नक्षत्र (पुष्य, अनुराधा, उत्तराभाद्रपदा), मगलनक्षत्र (मृगशिरा, चित्रा, घनिष्ठा) और शुक्रनक्षत्र (भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा) पर रहते राजसस्वभाव होने से अनिष्टप्रद है।

(८) राहु—इसका पैर पर अधिकार रहता है। यह एक राशि पर १॥ वर्ष रहता है। इसका अन्य नाम सैंहिकेय है। अग्रेजी मे इसे 'ड्रेगन्स हेड' कहते हैं। यह मकरराशि का स्वामी है। राहु के अपने नक्षत्र आर्द्रा; स्वाती, शतभिषा हैं। यह स्त्रीलिङ्गी और तामस गुणवाला है। इसका उच्चस्थान वृश्चिक और नीचस्थान वृष है। किसी-किसी के मत से वृष और मिथुन उच्चस्थान माना गया है। राहु की मित्र राशिया मिथुन, कन्या, तुला, धन, मकर तथा मीन है और शत्रु राशियाँ कर्क एव सिंह हैं। राहु का शुक्र के साथ राजस व्यवहार है और सूर्य एव चन्द्र से शत्रुत्व है। यह सप्तम भाव को पूर्णदृष्टि से देखता है। राहु की दैनिक गति ३ कला और ११ विकला है। यह पृथ्वी से ६० करोड़ मील दूर है और इसका व्यास २ लाख मील है। इसका राशिचक्र का पूर्ण भ्रमणकाल १८ वर्ष, ७ मास, १८ दिन और १५ घटी है। राहु ९३ वर्ष बाद पुन: उसी स्थान, नक्षत्र और राशिपर आता है। राहु महादशा १८ वर्ष की होती है।

विभिन्न स्थितियों के अनुसार राहु शक्ति-सम्पन्न शरीर, व्यग्र, शत्रुता और विलासिता का कारक है। वृष और तुला लग्न मे यह योगकारक है। राहु सब ग्रहों मे बलवान् होता है।

(९) केतु—इसका पैरो के तलवो पर अधिकार होता है। यह एक राशि पर १॥ वर्ष रहता है। इसका अन्य नाम शिखी है। अंग्रेजी मे इसे 'ड्रेगन्स टेल' कहते हैं। यह मेषराशि का स्वामी है और सब ग्रहो मे बली एवं मोक्षप्रद कहा गया है। इसके अपने नक्षत्र अश्विनी, मघा और मूल हैं। यह नपुंसकलिङ्गी और तामस स्वभाववाला है। इसका उच्च स्थान वृष और नीच स्थान वृश्चिक है। केतु की मित्र राशिया मिथुन, कन्या, धनु, मकर और मीन हैं तथा शत्रु राशियां कर्क एव सिंह है। इसका गुरु के साथ सात्विक, उत्तम व्यवहार और चन्द्र एवं सूर्य से शत्रुत्व है। इसकी सप्तम भावपर पूर्ण दृष्टि रहती है। केतु की दैनिक गति ३ कला और ११ विकला है। यह पृथ्वी से ९० करोड़ मील दूर है और इसका व्यास ३ लाख मील है। इसके राशिचक्र के पूर्ण भ्रमण का काल १८ वर्ष, ७ मास, १८ दिन और १५ घटी है। केतु भी राहु की तरह ९३ वर्ष बाद पुनः अपने उसी स्थान, नक्षत्र और राशि पर आता है। केतुमहादशा ७ वर्ष की होती है।

विभिन्न स्थितियों के अनुसार केतुग्रह अद्भुत स्वप्नदर्शन, अकस्मात् मृत्यु, कारावास, फोड़ा-फुन्सी, कुष्ठरोग और खराब स्प्रीट (रूहे) का कारक है।

(१०) वरुण—नवीन ज्योतिर्विज्ञानशास्त्रियो ने नवग्रहों के अतिरिक्त २ उपग्रहो की भी ग्रहों मे गणनाकर ११ ग्रह कहे हैं। उनमे से 'नेपच्युन' नामक ग्रह अपने यहां वरुणग्रह कहा गया है। यह एक राशि पर १४ वर्ष रहता है। यह मीनराशि का स्वामी है। जलराशि मे यह अधिक बलवान् होता है। इसका उच्च स्थान कर्क और नीच स्थान मकर है। नेपच्युन सूर्यमण्डल से २७७ करोड़ मील दूर और पृथ्वी से ८३ गुना बड़ा है। इसका व्यास ३४॥ हजार मील है। इसे पूरे राशिचक्र के भ्रमण मे १६८ वर्ष लगते हैं।

चरराशि मे इस ग्रह के रहने से पाचनशक्ति क्षीण होती है।

स्थिर राशि मे होने से आमाशय, पेट मे खराबी करता है और द्विस्वभाव राशिपर रहने से मेदा एव मज्जा मे विकृति करता है। यह ग्रह शुभ स्थान एव शुभ राशि पर होनेपर शुभप्रद ही होगा। उस स्थान और राशि के उद्योग धन्धे मे वह सफलता और यश देता है।

(११) प्रजापति—नवीन ज्योतिर्विज्ञानानुसार इसका नाम 'हर्षल' है। यह एक राशि पर ७ वर्ष रहता है। यह कुम्भराशि का स्वामी है। इसका उच्च स्थान वृश्चिक और नीच स्थान वृषभ है। हर्षल सूर्य से १७७ करोड़ मील दूर है। इसका आकार पृथ्वी से ६४ गुना बड़ा है और व्यास ३० हजार मील। यह ८४ वर्ष मे राशिचक्र का पूर्ण भ्रमण करता है।

हर्षलग्रह मिथुन, तुला और कुभ मे बलवान् और कारक बतलाया गया है। यह १, ३, ५, ७, ६ और १० भावों मे रहते उत्तम फलप्रद है। मेष, सिंह और धनु राशियों पर रहते उस मानव को अतिमहत्त्वाकांक्षी, साहसी और धीर बनाता है। कर्क, वृश्चिक और मीन पर रहने कामी, दुष्ट स्वभाव और दुराग्रही बनाता है। मिथुन, तुला और कुम्भ मे रहते अनेक शास्त्रप्रेमकारक रहा है। जन्मलग्न से जिस भाव में हर्षल हो उसी तरह जन्मराशि से भी उसका फल समझना चाहिये। साधारणतः आश्चर्यप्रद स्थान, अद्भुत मानव, जादू के खेल, गुप्त विद्याओं आदि पर विशेषकर हर्षल का ही प्रभाव होता है।

प्रथम प्रकरण समाप्त

द्वितीय प्रकरण

[जन्मांग-निर्माण-विधि और दशाविचार]

पिछले प्रकरण मे मानवशरीरस्थित नक्षत्रो, उनकी राशियों और उनके अधिपति ग्रहों का संक्षिप्त विवेचन किया जा चुका। इन नक्षत्र आदि की वहा स्थिति मानव के शरीरधारण के साथ ही सभव है। अर्थात् उसके जन्म से ही लेकर उक्त नक्षत्रादि उसके ब्रह्माण्डात्मक पिण्डाण्ड मे भी वास करते और अपना शुभ-अशुभ फल दिखाते है। यही स्थिति उनकी मुख्य है। गोचरकालीन स्थिति क्षणिक फलदायी मानी गयी है। अब यहा विचार करना है कि किस मनुष्य के जन्मकाल मे कैसी ग्रहस्थिति है और उसका उसपर क्या प्रभाव पड़ता है। इसका मार्ग जन्माग या जन्मकुण्डली ही है। जन्मकालीन ग्रहो का विचारकर इसका निर्माण किया जाता है और फिर उससे मानव के पूरे जीवन का भविष्य कहा जा सकता है। दूसरे शब्दो मे जन्माङ्ग मानवजीवन का दर्पण है जिसमे उसके समग्र जीवन का प्रतिबिम्ब दैवज्ञ को स्पष्ट परिलक्षित हो जाता है। अतएव अब यहा इसी जन्माङ्ग के साधन या निर्माण की शास्त्रीय विधि का विवेचन किया जा रहा है।

यह सच है कि मानव के जन्म कालीन ग्रह अच्छे बुरे फलो की पूर्व-सूचना देते और मानव ज्योतिष के माध्यम से उसे समझकर सभाव्य अनिष्ट के निराकरण का उपाय करता या सतर्क हो जाता है। अतएव ज्योतिष शास्त्र की उपयोगिता स्पष्ट है। किन्तु यह ध्यान रखने की बात है कि इस जन्मागनिर्माण के समय जन्मकालीन समय ठीक-ठीक लेना चाहिये और प्राणपद लग्न से इष्ट का शोधन भी टीक टीक होना चाहिये। लग्न के बदलने से सब ग्रहों के स्थान भी बदल जाते और उनके फलों मे अन्तर

भी आ जाता है। सिवा लग्नान्तर्गत लग्न भी क्षण-क्षण में बदलता रहता है। अतः इष्टसाधन में पूर्ण सतर्कता अपेक्षित है। इसीके अभाव में मोटे तौर पर जन्माग बना लेने पर, जैसा कि प्रायः किया जाता है, जन्म पत्री के फल ठीक-ठीक नहीं मिलते और व्यर्थ ही ज्योतिषशास्त्र बदनाम किया जाता है। नीचे सर्वप्रथम जन्मकालीन इष्टनिर्माण की विधि बतलायी जा रही है।

इष्टनिर्माण-विधि

पूरे दिन-रात के २४ घण्टों में जन्म लेनेवाले मानवों का सूर्योदय से इष्ट लग्न निकालने के चार प्रकार हैं—(१) दिनमान, (२) दिनार्ध, (३) रात्रिमान और (४) रात्र्यर्ध। इसका विवरण इस प्रकार है।

दिनमान—प्रातःकाल से मध्याह्न तक जन्म लेनेवालों का जन्म कालीन इष्टकाल निकालने के लिए सूर्योदय के समय से जन्मसमय तक घटा, मिनट और सेकण्डों के घटी, पल और विपल बना लिये जायँ तो ठीक वही उसका इष्टकाल होगा। **दिनार्ध**—मध्याह्न से सायकाल तक जन्म लेनेवालों का दिन के बारह बजे से जन्मतक के घण्टे आदि की घट्यादि बनाकर उसमें दिनार्ध जोड़ देने से इष्ट निकल आयेगा। **रात्रिमान**—सायकाल से मध्यरात्रि तक का जन्म लेनेवालों का इष्टकाल सूर्यास्त के समय से जन्मसमय तक के घटा-मिनिटो के घट्यादि बनाकर दिनमान जोड़ने से प्राप्त होगा। **रात्र्यर्ध**—मध्यरात्रि से सूर्योदय तक जन्म लेनेवालों का रात्रि के १२ बजे से जन्मकाल तक के घटा-मिनटो के घट्यादि बनाकर उसमें दिनमान और रात्र्यर्द्ध जोड़ने से जन्म इष्ट प्राप्त होगा। उपर्युक्त चार प्रकार के इष्ट पचाग के सूर्योदय समय पर निकाले जाते हैं।

स्थानीय सूर्योदय-समय का साधन

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि जातक का जन्मसमय प्रचलित स्टैण्डर्ड -टाइम ही नोट किया जाता है। और विभिन्न पञ्चाङ्गों में सूर्योदय-सूर्यास्त

वहांके स्थानीय (लोकल) समयानुसार ही लिखे रहते हैं, जो इष्ट-निर्माण के प्रमुख आधार हैं। अतः जातक का अपना अभीष्ट 'स्थानीय सूर्योदय समय' निकालने के लिए जो विधि करनी पड़ती है उसे सोदाहरण नीचे बताया जा रहा है।

जैसे—किसीका जन्म संवत् १६६६ चैत्र शुक्ल ५ को स्टैण्डर्डटाइम १२।३० बजे हुआ, उस स्थान के लेटीच्यूड ८.° ४४ उत्तर और लोंगीचूड ७७.४४ डिगरी पर है। इससे लोकल मीनटाइम निकालना है—

(१) जन्म समय १२।३०· -५।३० =७।० घंटे का ग्रीनवीच मीन-टाइम (जी. एम. टी.) होगा।

(२) ७७.° ४४ लोंगीचूड ÷ १५ = ५।११ हुए।

(३) घंटे ७ + ५।११ = १२-११। इस तरह १२-३० के स्टैण्डर्ड समय का लोकल समय १२-११ हुआ। पञ्चांगों मे प्रमुख नगरो की डिगरियां लिखी होती ही हैं।

अयनांशा सायन सूर्य-निर्माणविधि

इष्ट शाके मे से ४४४ घटानेपर जो शेष रहे उसमे ६० का भाग देना चाहिये, वही अयनाशा होता है। इस अयनाशा को स्पष्ट सूर्य मे जोड देने से सायन सूर्य बन जाता है।

ग्रह स्पष्ट करने की विधि

सर्वप्रथम पंचांग द्वारा ग्रहों के नक्षत्र निकालने चाहियें। जिस नक्षत्र के चरण पर जो ग्रह हो उन नक्षत्रों के अंश (डिगरी) प्रमाण से ही सरलता के साथ ग्रह स्पष्ट हो जायेंगे। अतएव नीचे नक्षत्रों के अंश (डिगरी) दिये जा रहे हैं।

नक्षत्र (चारों चरण)	अंश (डिगरी)
१ अश्विनी	३°२०—१३°२०
२ भरणी	१३°२०—२६°४०
३ कृत्तिका	२६°४०—४०°००
४ रोहिणी	४०°००—५३°२०
५ मृगशिरा	५३°२०—६६°४०
६ आर्द्रा	६६°४०—८०°००
७ पुनर्वसु	८०°००—९३°२०
८ पुष्य	९३°२०—१०६°४०
९ आश्लेषा	१०६°४०—१२०°००
१० मघा	१२०°००—१३३°२०
११ पूर्वाफाल्गुनी	१३३°२०—१४६°४०
१२ उत्तराफाल्गुनी	१४६°४०—१६०°००
१३ हस्त	१६०°००—१७३°२०
१४ चित्रा	१७३ २०—१८६°४०
१५ स्वाती	१८६°४०—२००°००
१६ विशाखा	२००°००—२१३°२०
१७ अनुराधा	२१३ २०—२२६ ४०
१८ ज्येष्ठा	२२६ ४०—२४०°००
१९ मूल	२४०°००—२५३°२०
२० पूर्वाषाढा	२५३°२०—२६६ ४
२१ उत्तराषाढा	२६६ ४०—२८० ००
२२ श्रवण	२८०°००—२९३ २०
२३ धनिष्ठा	२९३°२०—३०६°४०
२४ शततारका	३०६ ४०—३२० ००
२५ पूर्वाभाद्रपदा	३२०°००—३३३°२०

नक्षत्र (चारों चरण)	अंश (डिगरी)
२६ उत्तरा भाद्रपदा	३३३·२०—३४६·४०
२७ रेवती	३४६·४०—३६०·००

उपर्युक्त नक्षत्रों के मध्य जो भी ग्रह हों उनके अंशादि लेकर उनमें ३० का भाग दें तो वे स्पष्ट ग्रह के राशि-अंश होंगे। ग्रह नक्षत्रविशेष के जिस चरण में स्थित हो उसीके अनुसार उनकी गति द्वारा कला-विकलादि निकलना चाहिये। नक्षत्रों की गति के माध्यम से सभी ग्रह बड़ी सरलता से स्पष्ट हो जाते हैं।

पंचांग द्वारा स्पष्टग्रह विधि

ऊपर नक्षत्रों के अंशो द्वारा जन्मकालीन ग्रहोंके स्पष्टीकरण की एक विधि कही जा चुकी। अब सीधे पञ्चाग द्वारा भी स्पष्ट ग्रह निकाले जा सकते हैं। इसकी विधि इस प्रकार है—

पंचाग मे ध्यान देने पर दीख पड़ेगा कि नीचे सात-सात दिनो के स्पष्ट ग्रह और उनकी गति लिखी रहती है। उसीके आधार पर आप के स्पष्ट ग्रह निकल आते है। एतदर्थ जन्मदिन की निकटतम स्पष्ट ग्रह की पंक्ति लेनी चाहिये। यदि जन्म पंक्ति में लिखित दिन से पूर्व में हो तो ऋणचालक पद्धति से और यदि वह उसके बाद हो तो धनचालक पद्धति से स्पष्ट ग्रह निकालने होंगे। धनचालक पद्धति मे अपने जन्म-कालीन इष्टवार, घट्यादि मे से पंचागस्थ पंक्ति के वार, इष्ट-घट्यादि घटाने पड़ते हैं। और ऋणचालक पद्धति में पंक्ति के वार इष्ट आदि में से अपने जन्मकालीन वार, इष्ट आदि को घटाना पड़ता है। उस ऋण या धनचालक को पंचागप्रदर्शित ग्रहगति से गुणनकर जो फल प्राप्त हो उसे पंक्तिस्थित ग्रहों के अंशादि में उसी क्रम से (धन या ऋण) घटाने या जोड़ने पर ग्रहो के जो अंशादि मिलें वे ही उस राशि के स्पष्ट ग्रह होंगे।

स्पष्ट चन्द्रसाधन विधि

स्पष्ट चन्द्र निकालने के लिए निम्नलिखित विधि अपनानी चाहिये। प्रथम जन्मदिन के गत नक्षत्र के घटी-पलादि को ६० में से घटा उसे दो स्थानों पर रखें। फिर एक स्थान में अपने इष्ट-घट्यादि जोड़ दें तो वह 'भयात' और दूसरे स्थान पर उसी दिन के जन्मनक्षत्र के घट्यादि जोड़ने से 'भभोग' निकल आयेगा। उस भयात को ६० से गुणाकर भभोग का भाग देने पर 'स्पष्ट भयात' होगा। बाद अश्विनी नक्षत्र से गत नक्षत्र तक की सख्या गिनकर उसे ६० से गुणाकर स्पष्ट भयात में जोड़ें और फिर उसे द्विगुणितकर ९ का भाग दें तो चन्द्र के अंशादि बन जायेंगे। बाद उन अंशादि में ३० का भाग देने से स्पष्ट चन्द्र निकल आयेगा। चन्द्र की गति निकालने के लिए ८०० को ६० से गुणाकर भभोग का भाग देना चाहिये।

स्पष्ट लग्नसाधन विधि

सायन या स्पष्ट सूर्य से लग्न निकालने के दो प्रकार हैं—(१) निरयन और (२) सायन। निरयन—एतदर्थ स्पष्ट सूर्य के राशि-अंश की समान लग्नसारिणी के कोष्टक मे अपना जन्म-इष्ट जोड़ें और कोष्ठक से उसका मिलानकर घटायें। जिस राशि और अंश पर कोष्टक हो वे ही लग्न के राशि-अंश होंगे। शेष कोष्ठक में एष्य कोष्ठक को शेष का भाग दें तो लग्न की कला-विकला होंगी। उसी स्पष्ट लग्न में सूर्य की कला-विकला जोड देने से लग्न स्पष्ट हो जायगा। सायन सूर्य से भी उपर्युक्त रीति से लग्नसारिणी मे क्रिया करनी चाहिये। फिर प्राप्त लग्न में से अयनांश घटाने पर लग्न स्पष्ट हो जाता है।

अब सूर्योदय द्वारा लग्न प्रमाण घटिका बतलायी जाती है जिससे सरलता के साथ लग्न स्पष्ट हो जाता है। जिस दिन का जन्म जितने इष्ट पर हो उस दिन के स्पष्ट सूर्य राशि के अंशादि पर ही सूर्योदय से लग्न

प्रारम्भ होता है जो दिन-रात बारह राशियों पर घूमता है। सूर्यराशि के ही घटी-पल को इष्ट तक जोड़ने से लग्न स्पष्ट हो जायगा।

मेष—३।५८	वृषभ—४।२७	मिथुन—५।१०
कर्क—५।३६	सिंह— ५।३१	कन्या—५।१८
तुला—५।१८	वृश्चिक—५।३१	धन—५।३६
मकर—५।१०	कुंभ—४।२७	मीन—३।५८

घट्यादि तक एक राशि पर लग्न रहता है।

भावसाधन-विधि

लग्न बनाने के बाद ही भावचक्र की आवश्यकता होती है। भाव-लग्न ही है, जो १२ बताये गये हैं। स्पष्ट लग्न से लगभग पहले के १५ अश और बाद के १५ अंश मिलकर एक भाव होता है। साधारणतः इसी प्रकार द्वितीय भाव से बारह भावोंतक आगे पीछे की संधिया समझनी चाहियें। इस तरह एक राशि के ग्रहो के अंशादि दूसरे भाव से भी चले जाने से उन ग्रहो का आगे की दूसरी राशियों से भी सम्बन्ध हो जाता है। फलतः फलभेद होता है। अतएव भाव का साधन तथा भाव-कुडली का प्रयोग अत्यावश्यक है।

दशम भावसाधन

लग्न मे छः राशियां जोड़ने से सप्तम भाव के राश्यादि स्पष्ट हो जाते हैं और सप्तम भाव के राश्यादि मे तीन राशियां जोड़ने या लग्न के राश्यादि मे तीन राशियां घटाने से दशम भाव स्पष्ट हो जाता है। इसी तरह दशम भाव मे छः राशिया जोड़ने से चतुर्थ भाव स्पष्ट होता है। दशम भाव के स्पष्टीकरण की यह सरल क्रिया है। हमारे पूज्य स्वर्गीय गुरुवर श्री-रामयत्न ओझाजी का भी यही मत था कि स्पष्ट लग्न मे से तीन राशियां घटाकर जो फल प्राप्त हो वही शुद्ध दशम लग्न होता है। दशम लग्न

बनाने के कई प्रकार ज्योतिष गणित शास्त्र में दिये गये हैं जो दशम लग्न-सारिणी से निकाले जाते हैं।

स्पष्ट भावसाधन विधि

बारह भावों में चार के स्पष्ट हो जाने के बाद शेष आठ भावों के स्पष्टीकरण की साधारण रीति यह है कि दशम भाव और लग्न का अन्तर निकाल या लग्न से दशम को घटा उसमे तीन का भाग देना चाहिये। फिर तृतीयाश द्वादश भाव तक जोड़ दें। इसी प्रकार चतुर्थ मे लग्न को घटा और तीन का भाग देकर तृतीयाश जोड़ने से सब भाव और संधिया बन जायगी। स्पष्ट ग्रह और स्पष्ट भाव द्वारा मिलानकर ग्रहोंको राशियों पर चलित सन्धिगत देख भावकुण्डली बनानी चाहिये।

जन्मपत्रिका-निर्माण का क्रम

अब प्रसगतः जन्मपत्रिका-निर्माण का क्रम भी लिख दिया जा रहा है। उपर्युक्त पद्धति से इष्ट लग्न, ग्रह-भावादि का पूरा गणितकर जन्म-पत्रिका निम्नलिखित विधि से लिखनी चाहिये।

सर्वप्रथम मगलाचरण श्लोक 'स जयति सिंधुर......आदित्यादि ग्रहाः... जननी जन्मसौख्यानाम्' आदि लिखकर फिर सवत्, शाके, मास, पक्ष, तिथि-वार घट्यादिसहित, नक्षत्र घट्यादि, योग घट्यादि, करण घट्यादि, दिनमान, रात्रिमान, सूर्योदयादिष्ट, स्पष्ट सूर्या, स्पष्ट लग्न लिखें। पश्चात् पिता के नामादि और नक्षत्रचरण पर जातक पुत्र या कन्या के नाम लिखें। फिर उसकी राशि, राशिस्वामी, वर्ग, वर्ण, वश्ययोनि, गण, नाडी लिखकर जन्मकुण्डली और राशिकुण्डली लिखे। पश्चात् स्पष्ट ग्रह, स्पष्ट भावों को लिखकर चलित कुण्डली (भावचक्र) बनाकर ग्रहो और राशियो का फल लिखे।

फिर भावकुण्डली के १२ भावो का अलग-अलग विचारकर उनका फल लिखें। एतदर्थ षडवर्गों के चक्र—होरा, द्रेष्काण, नवमांश, सप्तमाश द्वादशांश और त्रिशाश निकालकर ग्रहो के अशादि का विचार करे। इन्हे और सूक्ष्म रीति से देखना हो तो दृष्टिबल, चेष्टाबल, दृग्बल, अवस्थाबल भी निकालें। पश्चात् विंशोत्तरी दशा, अष्टोत्तरी दशा, योगिनीदशा के चक्र तथा अन्तर्दशा, प्रत्यन्तरदशा और उनके फल लिखे।

अंत में योगायोग, आयुर्दाय, बलाबल के भावपरक योग और पूर्वजन्मानुसार ग्रहो का प्रायश्चित्त, अरिष्टनिवारण-प्रयोग लिखकर जन्मपत्र-निर्माण पूरा करें।

षड्वर्ग-विचार

उपर्युक्त क्रम से सभी ग्रह और भाव स्पष्ट होकर जन्मकुण्डली और भावचलित कुण्डली बन जाती है जिस पर से जातक के दैव का बहुत कुछ अन्दाज दैवज्ञ लगा लेता है। किन्तु इससे भी सूक्ष्मस्तर पर उतरने और उस मानव के विभिन्न फलादि का ठीक-ठीक समय निकालने के लिए तथा साधक-बाधक विचारार्थ उस ग्रहो के षड्वर्ग और दशा-महादशाओं का भी विचार आवश्यक है। अतः प्रथम षड्वर्ग पर प्रकाश डाला जा रहा है।

षड्वर्ग विचार का रहस्य

षड्वर्ग कुण्डली रखने का प्रयोजन राशि-भावों के सूक्ष्मफल निकालना है। यथा—लग्न से देह का विचार, होरा से सपदादि सुख, द्रेष्काण से भ्रातृभाव सुख, सप्तमाश से पुत्र-पौत्रादि सुख, नवमाश से कलत्र आदि का सुख, द्वादशाश से पितृ-मातृ-सौख्य और, त्रिशांश से अरिष्ट, दुःखादि का विचार होता है। पहले नीचे दिये गये चक्रो पर ध्यान दें। इनसे षड्वर्ग और दशाओं का बोध सुलभ होगा। पश्चात् दशाओ के बारे मे सविस्तर विचार किया जायगा।

नक्षत्रानुसारी षड्वर्ग चक्र

(मेष)

नक्षत्र	अंशादि (डिग्री)	राशि	होरा	द्रेष्काण	नवमांश	द्वादशांश	त्रिंशांश	महादशा
अश्विनी	०|०	१	५	१	१	१	१	केतु
,,	२|३०	१	५	१	१	२	१	
,,	३|२०	१	५	१	२	२	१	७
,,	५|०	१	५	१	२	३	११	
,,	६|४०	१	५	१	३	३	११	वर्ष
,,	७|३०	१	५	१	३	४	११	,,
,,	१०|०	१	५	५	४	५	९	,,
,,	१२|३०	१	५	५	४	६	९	,,
भरणी	१३|२०	१	५	५	५	६	९	शुक्र
,,	१५|०	१	४	५	५	७	९	२०
,,	१६|४०	१	४	५	६	७	९	वर्ष
,,	१७|३०	१	४	५	६	८	९	,,
,,	१८|०	१	४	५	६	८	३	,,
,,	२०|०	१	४	९	७	९	३	,,
,,	२२|३०	१	४	९	७	१०	३	,,
,,	२३|२०	१	४	९	८	१०	३	,,
,,	२५|०	१	४	९	८	११	७	
कृत्तिका	२६|४०	१	४	९	९	११	७	सूर्य
,,	२७|३०	१	४	९	९	१२	७	६
,,	३०|०	२	४	२	१०	२	२	वर्ष

(वृषभ)

नक्षत्र	अंशादि	राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रिं०	महादशा
कृत्तिका	३२।३०	२	४	२	१०	३	२	सूर्य.
,,	३३।२०	२	४	२	११	३	२	६
,,	३५।०	२	४	२	११	४	६	वर्ष
,,	३६।४०	२	४	२	१२	४	६	,
,,	३७।३०	२	४	२	१२	५	६	,
रोहिणी	४०।०	२	४	६	१	६	६	चन्द्र
,,	४२।०	२	४	६	१	६	१२	१०
,,	४२।३०	२	४	६	१	७	१२	वर्ष
,,	४३।२०	२	४	६	२	७	१२	,
,,	४५।०	२	५	६	२	८	१२	,
,,	४६।४०	२	५	६	३	८	१२	,
,,	४७।३०	२	५	६	३	९	१२	,
,,	५०।०	२	५	१०	४	१०	१०	,
,,	५२।३०	२	५	१०	४	११	१०	,
मृगशिरा	५३।२०	२	५	१०	५	११	१०	मंगल
,,	५५।०	२	५	१०	५	१२	८	७
,,	५६।४०	२	५	१०	६	१२	८	वर्ष
,,	५७।३०	२	५	१०	६	१	८	,
,,	६०।०	३	५	३	७	३	१	,

(मिथुन)

नक्षत्र	अंश०	राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रिं०	महादशा
मृगशिरा	६२।३०	३	५	३	७	४	१	भौम
,,	६३।२०	३	५	३	८	४	१	७
,,	६५।०	३	५	३	८	५	११	वर्ष
आर्द्रा	६६।४०	३	५	३	९	५	११	राहु
,,	६७।३०	३	५	३	९	६	११	१८
,,	७०।०	३	५	७	१०	७	९	वर्ष
,,	७२।३०	३	५	७	१०	८	९	,,
,,	७३।२०	३	५	७	११	८	९	,,
,,	७५।०	३	४	७	११	९	९	,,
,,	७६।४०	३	४	७	१२	९	९	,,
,,	७७।३०	३	४	७	१२	१०	९	,,
,,	७८।०	३	४	७	११	१०	३	,,
पुनर्वसु	८०।०	३	४	१२	१	१२	३	गुरु
,,	८२।३०	३	४	११	१	१२	३	१६
,,	८३।२०	३	४	११	२	१२	३	वर्ष
,,	८५।०	३	४	११	२	१	७	,,
,,	८६।४०	३	४	११	३	१	७	,,
,,	८७।३०	३	४	११	३	२	७	,,
,,	९०।०	४	४	४	४	४	२	,,

(कर्क)

नक्षत्र	अंश०	राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रिं०	महादशा
पुनर्वसु	९२।३०	४	४	४	४	५	२	
पुष्य	९३।२०	४	४	४	५	५	२	शनि
,,	९५।०	४	४	४	५	६	६	१९
,,	९६।४०	४	४	४	६	६	६	वर्ष
,,	९७।३०	४	४	४	६	७	६	,
,,	१००।०	४	४	८	७	८	६	,
,,	१०२।०	४	४	८	७	८	१२	,
,,	१०२।३०	४	४	८	७	९	१२	,
,,	१३०।२०	४	४	८	८	९	१२	,
,,	१०५।०	४	५	८	८	१०	१२	,
आश्लेषा	१०६।४०	४	५	८	९	१०	१२	बुध
,,	१०७।३०	४	५	८	९	११	१२	१७
,,	११०।०	४	५	१२	१०	१२	१०	वर्ष
,,	११२।३०	४	५	१२	१०	१	१०	,
,,	११३।२०	४	५	१२	११	१	१०	,
,,	११५।०	४	५	१२	११	२	८	,
,,	११६।४०	४	५	१२	१२	२	८	,
,,	११७।३०	४	५	१२	१२	३	८	,
,,	१२०।०	५	५	५	१	५	१	,

(सिंह)

नक्षत्र	अंशादि	राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रिं०	महादशा
मघा	१२२।३०	५	५	५	१	६	१	केतु
,,	१२३।२०	५	५	५	२	६	१	७
,,	१२५।०	५	५	५	२	७	११	वर्ष
,,	१२६।४०	५	५	५	३	७	११	,
,,	१२७।३०	५	५	५	३	८	११	,
,,	१३०।०	५	५	९	४	९	९	,
,,	१३२।३०	५	५	९	४	१०	९	,
पूर्वाफा०	१३३।२०	५	५	९	५	१०	९	शुक्र
,,	१३५।०	५	४	९	५	११	९	२०
,,	१३६।४०	५	४	९	६	११	९	वर्ष
,,	१३७।३०	५	४	९	६	१२	९	,
,,	१३८।०	५	४	९	६	१२	३	,
,,	१४०।०	५	४	१	७	१	३	,
,,	१४२।३०	५	४	१	७	२	३	,
,,	१४३।२०	५	४	१	८	२	३	,
,,	१४५।०	५	४	१	८	३	७	,
उत्तराफा०	१४६।४०	५	४	१	९	३	७	सूर्य
,,	१४७।३०	५	४	१	९	४	७	६
,,	१५०।०	६	४	६	१०	६	२	वर्ष

(कन्या)

नक्षत्र	अंशादि राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रिं०	महादशा
उत्तराफा०	१५२।३०	६	४	६	१०	७	२	सूर्य
"	१५३।२०	६	४	६	११	७	२	६
"	१५५।०	६	४	६	११	८	६	वर्ष
"	१५६।४०	६	४	६	१२	८	६	,
"	१५७।३०	६	४	६	१२	९	६	,
हस्त	१६०।०	६	४	१०	१	१०	६	चन्द्र
"	१६२।०	६	४	१०	१	१०	१२	१०
"	१६२।३०	६	४	१०	१	११	१२	वर्ष
"	१६३।२०	६	४	१०	२	११	१२	,
"	१६५।०	६	५	१०	२	१२	१२	,
"	१६६।४०	६	५	१०	३	१२	१२	,
"	१६७।३०	६	५	१०	३	१	१२	,
"	१७०।०	६	५	२	४	२	१०	,
"	१७२।३०	६	५	२	४	३	१०	,
चित्रा	१७३।२०	६	५	२	५	३	१०	मंगल
"	१७५।०	६	५	२	५	४	८	७
"	१७६।४०	६	५	२	६	४	८	वर्ष
"	१७७।३०	६	५	२	६	५	८	,
"	१८०।०	७	५	७	७	७	१	,

(तुला)

नक्षत्र	अंशादि	राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रिं०	महादशा
चित्रा	१८२।३०	७	५	७	७	८	१	मगल
,,	१८३।२०	७	५	७	८	८	१	७
,,	१८५।०	७	५	७	८	९	११	र्षव
स्वाती	१८६।४०	७	५	७	९	९	११	राहु
,,	१८७।३०	७	५	७	९	१०	११	१८
,,	१९०।०	७	५	११	१०	११	९	पर्ष
,,	१९२।३०	७	५	११	१०	१२	९	,
,,	१९३।२०	७	५	११	११	१२	९	,
,,	१९५।०	७	४	११	११	१	९	,
,,	१९६।४०	७	४	११	१२	१	९	,
,,	१९७।३०	७	४	११	१२	२	९	,
,,	१९८।०	७	४	११	१२	२	३	,
विशाखा	२००।०	७	४	३	१	३	३	गुरु
,,	२०२।३०	७	४	३	१	४	३	१६
,,	२०३।२०	७	४	३	२	४	३	वर्ष
,,	२०५।०	७	४	३	२	५	७	,
,,	२०६।४०	७	४	३	३	५	७	,
,,	२०७।३०	७	४	३	३	६	७	,
,,	२१०।०	८	४	८	४	८	२	,

(वृश्चिक)

नक्षत्र	अंशादि	राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रिं०	महादशा
विशाखा	२१२।३०	८	४	८	४	९	२	गुरु
अनुराधा	२१३।२०	८	४	८	५	९	२	शनि
,,	२१५।०	८	४	८	५	१०	६	१९
,,	२१६।४०	८	४	८	६	१०	६	वर्ष
,,	२१७।३०	८	४	८	६	११	६	,,
,,	२२०।०	८	४	१२	७	१२	६	,,
,,	२२२।०	८	४	१२	७	१२	१२	,,
,,	२२२।३०	८	४	१२	७	१	१२	,,
,,	२२३।२०	८	४	१२	८	१	१२	,,
,,	२२५।०	८	५	१२	८	२	१२	,,
ज्येष्ठा	२२६।४०	८	५	१२	९	२	१२	बुध
,,	२२७।३०	८	५	१२	९	३	१२	१७
,,	२३०।०	८	५	४	१०	४	१०	वर्ष
,,	२३२।३०	८	५	४	१०	५	१०	,,
,,	२३३।२०	८	५	४	११	५	१०	,,
,,	२३५।०	८	५	४	११	६	८	,,
,,	२३६।४०	८	५	४	१२	६	८	,,
,,	२३७।३०	८	५	४	१२	७	८	,,
,,	२४०।०	९	५	९	१	९	१	,,

(धनु)

नक्षत्र	अंशादि	राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रिं०	महादशा
मूल	२४२।३०	६	५	६	१	१०	१	केतु
,,	२४३।२०	६	५	६	२	१०	१	७
,,	२४५।०	६	५	६	२	११	११	वर्ष
,,	२४६।४०	६	५	६	३	११	११	,
,,	२४७।३०	६	५	६	३	१२	११	,
,,	२५०।०	६	५	१	४	१	६	,
,,	२५२।३०	६	५	१	४	२	६	,
पूर्वाषा०	२५३।२०	६	५	१	५	२	६	शुक्र
,,	२५५।०	६	४	१	५	३	६	२०
,,	२५६।४०	६	४	१	६	३	६	वर्ष
,,	२५७।३०	६	४	१	६	४	६	,
,,	२५८।०	६	४	१	६	४	३	,
,,	२६०।०	६	४	५	७	५	३	,
,,	२६२।३०	६	४	५	७	६	३	,
,,	२६३।२०	६	४	५	८	६	३	,
,,	२६५।०	६	४	५	८	७	७	,
उत्तराषा०	२६६।४०	६	४	५	६	७	७	सूर्य
,,	२६७।३०	६	४	५	६	८	७	६
,,	२७०।०	१०	४	१०	१०	१०	२	वर्ष.

(मकर)

नक्षत्र	अंशादि	राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रि०	महादशा
उत्तराषा०	२७२।३०	१०	४	१०	१०	११	२	सूर्य
,,	२७३।२०	१०	४	१०	११	११	२	६
,,	२७५।०	१०	४	१०	११	१२	६	वर्ष
,,	२७६।४०	१०	४	१०	१२	१२	६	,
,,	२७७।३०	१०	४	१०	१२	१	६	,
श्रवण	२८०।०	१०	४	२	१	२	६	चन्द्र
,,	२८२।०	१०	४	२	१	२	१२	१०
,,	२८२।३०	१०	४	२	१	३	१२	वर्ष
,,	२८३।२०	१०	४	२	२	३	१२	,
,,	२८५।०	१०	५	२	२	४	१२	,
,,	२८६।४०	१०	५	२	३	४	१२	,
,,	२८७।३०	१०	५	२	३	५	१२	,
,,	२९०।०	१०	५	६	४	६	१०	,
,,	२९२।३०	१०	५	६	४	७	१०	,
धनिष्ठा	२९३।२०	१०	५	६	५	७	१०	मंगल
,,	२९५।०	१०	५	६	५	८	८	७
,,	२९६।४०	१०	५	६	६	८	८	वर्ष
,,	२९७।३०	१०	५	६	६	९	८	,
,,	३००।०	११	५	११	७	११	१	,

(कुंभ)

नक्षत्र	अंशादि	राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रिं०	महादशा
धनिष्ठा	३०२।३०	११	५	११	७	१२	१	मंगल
,,	३०३।२०	११	५	११	८	१२	१	७
,,	३०५।०	११	५	११	८	१	११	वर्ष
शतभिषा	३०६।४०	११	५	११	९	१	११	राहु
,,	३०७।३०	११	५	११	९	२	११	१८
,,	३१०।०	११	५	३	१०	३	९	वर्ष
,,	३१२।३०	११	५	३	१०	४	९	,
,,	३१३।२०	११	५	२	११	४	९	,
,,	३१५।०	११	४	३	११	५	९	,
,,	३१६।४०	११	४	३	१२	५	९	,
,,	३१७।३०	११	४	३	१२	६	९	,
,,	३१८।०	११	४	३	१२	६	३	,
पूर्वाभा०	३२०।०	११	४	७	१	७	३	गुरु
,,	३२२।३०	११	४	७	१	८	३	१६
,,	३२३।२०	११	४	७	२	८	३	वर्ष
,,	३२५।०	११	४	७	२	९	७	,
,,	३२६।४०	११	४	७	३	९	७	,
,,	३२७।३०	११	४	७	३	१०	७	,
,,	३३०।०	१२	४	१२	४	११	२	,

(मीन)

नक्षत्र	अंशादि	राशि	हो०	द्रे०	न०	द्वा०	त्रिं०	महादशा
पूर्वाभा०	३३२।३०	१२	४	१२	४	२	२	गुरु
उत्तराभा०	३३३।२०	१२	४	१२	५	१	२	शनि
,,	३३५।०	१२	४	१२	५	२	६	१९
,,	३३६।४०	१२	४	१२	६	२	६	वर्ष
,,	३३७।३०	१२	४	१२	६	३	६	,
,,	३४०।०	१२	४	४	७	४	६	,
,,	३४२।०	१२	४	४	७	४	१२	,
,,	३४२।३०	१२	४	४	७	५	१२	,
,,	३४३।२०	१२	४	४	८	५	१२	,
,,	३४५।०	१२	५	४	८	६	१२	,
रेवती	३४६।४०	१२	५	४	९	६	१२	बुध
,,	३४७।३०	१२	५	४	९	७	१२	१७
,,	३५०।०	१२	५	८	१०	८	१०	वर्ष
,,	३५२।३०	१२	५	८	१०	९	१०	,
,,	३५३।२०	१२	५	८	११	९	१०	,
,,	३५५।०	१२	५	८	११	१०	८	,
,,	३५६।४०	१२	५	८	१०	१०	८	,
,,	३५७।३०	१२	५	८	१२	११	८	,
,,	३६०।०	१	५	१	१	१	१	मेष प्रारम्भ

सप्तांश चक्र

राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी०
अंशादि	मं०	म	बु०	श०	सू०	गु०	शु०	शु०	गु०	च०	श०	बु०
४।१७।८	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६
८।३४।१७	शु०	गु०	च०	श०	बु०	म०	म०	बु०	श०	सू०	गु०	शु०
	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७
१२।५१।२५	बु०	श०	सू०	गु०	शु०	शु०	गु०	च०	श०	बु०	म०	म०
	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८
१७।८।३४	च०	श०	बु०	म०	म०	बु०	श०	सू०	गु०	शु०	शु०	गु०
	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९
२१।२५।४२	सू०	गु०	शु०	शु०	गु०	च०	श०	बु०	म०	म०	बु०	श०
	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०
२५।४२।५१	बु०	म०	म०	बु०	श०	सू०	गु०	शु०	शु०	गु०	च०	श०
	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११
३०।०।०	शु०	शु०	गु०	च०	श०	बु०	म०	म	बु०	श०	सू०	गु०
	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२

जिज्ञासुओं के लाभार्थ ऊपर विस्तृत रूप से षड्वर्गीय चक्र देकर, भावसम्बन्धी पूरा गणित आदर्शवत् रख दिया गया है। अन्त में सप्तांश चक्र भी दे दिया गया है। दैवज्ञ का कर्तव्य है कि इनपर सूक्ष्म दृष्टि से विचार करके ही फल कहे।

अब जातक के और भी सूक्ष्म फलादेश के लिए नवग्रहों की महादशा, अन्तर्दशाओं का विचार किया जायगा।

महादशा-अन्तर्दशा विचार

षड्वर्गविचार के बाद जन्मपत्रविचार में नवग्रहों की महादशा, अन्तर्दशा का विचार किया जा रहा है। प्रथम दशा, अन्तर्दशासाधन-विधि, फिर अन्तर्दशाचक्र और पश्चात् एतत्सम्बन्धी सूक्ष्म फलादेश पर विचार किया जायगा।

नवग्रहो की ये महादशा, अन्तर्दशा और प्रत्यन्तरदशाएं उन ग्रहों के आश्रय नक्षत्रों के अंशादिकों पर चलती हैं तथा उन्हींसे इनका बोध होता है। नवग्रहों की इन महादशाओं के वर्ष निम्नलिखित हैं—रवि ६, चन्द्र १०, मगल ७, राहु १८, गुरु १६, शनि १९, बुध १७, केतु ७, और शुक्र २०। यों तो दशाओं के अनेक भेद हैं, किन्तु उनमे विंशोत्तरी और अष्टोत्तरी दशाएं विशेष महत्व की हैं।

महादशा-अन्तर्दशा-साधन विधि

किसी जातक की जन्म-कालीन महादशा निकालने के लिए निम्न-लिखित विधि अपनानी चाहिये—कृत्तिका नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनकर प्राप्त संख्या को ९ का भाग देना चाहिये। जो शेष रहे वही उस जातक की आदिदशा होगी। दशाओं मे ग्रहो का काम निम्नलिखित है—(१) सूर्य, (२) चन्द्र, (३) मगल, (४) राहु, (५) गुरु, (६) शनि, (७) बुध, (८) केतु और (९) शुक्र।

भुक्त-भोग्य वर्षादिज्ञान की विधि

जन्मकालीन आदिम दशा के भुक्त और भोग्य वर्ष, मास, दिन, घटी और पल के ज्ञानार्थ निम्नलिखित विधि अपनानी चाहिये—सर्व-प्रथम जातक के पूर्वोक्त भयात और भभोग के घटी-पलो मे प्रत्येक की घटियों के भी पल बना लें और पलों मे मिलाकर दोनों के २ पलसमुदाय लिख लें। फिर भयात के पलों को प्राप्त आदिम दशा के क्रमाङ्क से गुणा करें और भभोग के पलों का भाग दे दें। जो लब्धि आयेगी वे ही

उस दशा के भुक्त वर्ष होंगे। उसी शेष को पुनः १२ से गुणाकर भभोग का भाग देने से प्राप्त लब्धि भुक्त दशा के मास होंगे। इसके शेष को ३० से गुणाकर भभोग का भाग देने से प्राप्त लब्धि भुक्तदशाके दिन होंगे। इस शेष को ६० से गुणाकर भभोग का भाग देने से प्राप्त लब्धि भुक्त दशाके दिनों की घटी होगी। और इस शेष को पुनः ६० से गुणनकर भभोग के भाग देने से प्राप्त लब्धि भुक्त दशा की दिनघटी के पल होंगे।

इसी लब्ध वर्ष आदि को उस दशा के वर्ष मे घटा देने से जितने वर्ष आदि प्राप्त हों उतनी ही भोग्य दशा होगी।

स्पष्ट चन्द्र से भुक्त-भोग्य वर्षादि साधन

इसके अतिरिक्त यदि स्पष्ट चन्द्र साधन कर लिया हो तो उसके द्वारा भी जन्मकालीन भुक्त-भोग्य दशा और उसके वर्षादि निकल सकते हैं जिसकी विधि निम्नलिखित है— जन्मकालीन स्पष्ट चन्द्र के राश्यादि की कलाए बना ले और उसमे ८०० का भाग दें। जो लब्धि हो वह गत नक्षत्र होगा। शेष को जन्मकालीन ग्रह की दशा के वर्षों से गुणा करें। फिर उस गुणनफल मे ८०० का भाग दे तो जो लब्धि प्राप्त हो वह भुक्त वर्ष होंगे। इसी क्रिया से मास, दिन, घट्यादि निकाल लें।

इसी भुक्त वर्षादि को ग्रह के दशावर्षों मे घटाने पर भोग्य दशा के वर्षादि निकल आयेंगे। नीचे प्रथम विधि को उदाहरण द्वारा समझाया जा रहा है।

उदाहरण—मान लीजिये, किसीका जन्म पूर्वाषाढा नक्षत्र के प्रथम चरण का है जो कृत्तिका नक्षत्र से १८ वा पड़ता है। इस अठारह में ९ का भाग देने से शेष ० अर्थात् ९ ही बचता है। यही नौ ९ क्रमाक की शुक्र की दशा जन्मकाल में सिद्ध होती है।

इस नक्षत्र का भयात ७।१० और भयोग ६६।२९ है! इनके पल ये होंगे—३९८९ भभोग, ४३० भयात। इस ४३० भयात को शुक्रदशा के वर्ष २० से गुणा करने पर (४३०×२०=८६००) ८६०० प्राप्त

हुए। इसमे ३९८९ भभोग का भाग देने पर (८६०० ÷ ३९८९ = २) २ वर्ष प्राप्त हुए। शेष ६२२ को १२ से गुणाकर (६२२ × १२ = ७४६४) प्राप्त ७४६४ मे भभोग का भाग देने से (७४६४ ÷ ३९८९ = १) लब्धि १ मास निकला। शेष ३४७५ को ३० (दिन) से गुणा-कर (३४७५ × ३० = १०४२५०) प्राप्त १०४२५० मे भभोग का भाग देने से (१०४२५० ÷ ३९८९ = २६) लब्धि २६ आया जो दिन हैं। शेष ५३६ को ६० से गुणाकर (५३६ × ६० = ३२१६०) प्राप्त ३२१६० मे भभोग का भाग देने से (३२१६० ÷ ३९८९ = ८) लब्धि ८ घटी हुई। शेष २४८ को ६० से गुणाकर (२४८ × ६० = १४८८०) उसमे भभोग का भाग देने से (१४८८० ÷ ३९८९ = ४) लब्धि ४ पल हुए। इस तरह पूर्वाषाढा के प्रथम चरण के जातक की जन्मकालीन २० वर्ष की शुक्र महादशा मे भुक्त दशा के २ वर्ष, १ मास, २६ दिन, ८ घटी और ४ पल सिद्ध होते हैं।

इस २।१।२६।८।४ को २० वर्ष मे घटाने पर १७ वर्ष, १० मास, ३ दिन, ५१ घटी और ५६ पल शुक्र की भोग्य दशा प्राप्त होती है।

अन्तर्दशा-साधन विधि

अन्तर्दशा निकालने के लिए निम्नलिखित विधि अपनानी चाहिये—जिस ग्रह की अन्तर्दशा निकालनी हो उसके दशावर्षों को उसी सख्या से गुणाकर १२० का भाग देने पर प्राप्त लब्धि वर्ष होंगे। शेष को १२ से गुणाकर १२० का भाग देने से प्राप्त लब्धि मास होंगे। इतने ही समय तक उस ग्रह की अन्तर्दशा होगी। अन्तर्दशा का क्रम भी महादशा के अनुसार है।

अब जिज्ञासुओं लाभार्थ अन्तर्दशाओ के चक्र भी नीचे दिये जा रहे हैं। महादशा के वर्ष ऊपर बता ही दिये, अतः उसके चक्र की आवश्यकता नहीं। इसके बाद दशादि का फलादिसम्बन्धी सूक्ष्मविचार किया जायगा।

सूर्यमहादशा का अन्तर्दशाचक्र

(कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा नक्षत्रों पर)

ग्रह	सू०	चं०	म०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०
वर्ष	०	०	०	०	०	०	०	०	१
मास	३	६	४	१०	९	११	१०	४	०
दिन	१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०

अशादि २६।४० से ४० डिगरी तक, १४६।४० से १६० डिगरी तक और २६६।४० से २८० डिगरी तक सूर्य का प्रभाव रहता है।

महादशा-अन्तर्दशा का क्रम इसी नक्षत्र से प्रारम्भ होता है। परन्तु शून्य डिगरी से नक्षत्रों मे दशा निकालनी चाहिये। केतु ग्रह शून्य डिगरी पर तक और स्थित होने से दिखायी नहीं देता।

चन्द्रमहादशा का अन्तर्दशाचक्र

(रोहिणी, हस्त, श्रवण नक्षत्रों पर)

ग्र०	च०	मं०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०
व०	०	०	१	१	१	१	०	१	०
मा०	१०	७	६	४	७	५	७	८	६
दि०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अशादि ४०।०० से ५३।२०, १६०।०० से १७३।२० और २८०।०० से २९३।२० डिगरी तक चन्द्र का प्रभाव रहता है।

भौममहादशा का अन्तर्दशाचक्र

(मृगशिरा, चित्रा, धनिष्ठा नक्षत्रों पर)

ग्रह	म०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०
वर्ष	०	१	०	१	०	०	१	०	०
मा०	४	०	११	१	११	४	२	४	७
दि०	२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०

डिगरी ५३।२० से ६६।४०, १७३।२० से १८६।४० और २९३।२० से ३०६।४० तक मंगल का प्रभाव रहता है।

राहुमहादशा का अन्तर्दशाचक्र

(आर्द्रा, स्वाती, शततारका नक्षत्रों पर)

ग्र०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०
व०	२	२	२	२	१	३	०	१	१
मा०	८	४	१०	६	०	०	१०	६	०
दि०	१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८

डिगरी ६६।४० से ८०।००, १८६।४० से २००।० तक और ३०६।४० से ३२० डिगरी तक राहु का प्रभाव रहता है।

गुरुमहादशा का अन्तर्दशाचक्र

(पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्रों पर)

ग्र०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	रा०
व०	२	२	२	०	२	०	१	०	२
मा०	१	६	३	११	८	९	४	११	४
दि०	१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४

डिगरी ८०।० से ९३।२० तक, २००।० से २१३।२० तक और ३२०।० से ३३३।२० डिगरियों तक गुरु का प्रभाव रहता है।

शनिमहादशा का अन्तर्दशाचक्र

(पुष्य, अनुराधा, उत्तराभाद्रपदा नक्षत्रों पर)

ग्र०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	गु०
व०	३	२	१	३	०	१	१	२	२
मा०	०	८	१	२	११	७	१	१०	६
दि०	३	९	९	०	१२	०	९	६	१२

अंश ९३।२० से १०६।४० तक, २१३।२० से २२६।४० तक और ३३३।२० से ३४६।४० तक शनि का प्रभाव रहता है।

बुधमहादशा का अन्तर्दशाचक्र

(आश्लेपा, ज्येष्ठा, रेवती नक्षत्रो पर)

ग्र०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	गु०	श०
व०	२	०	२	०	१	०	२	२	२
मा०	४	११	१०	१०	५	११	६	३	८
दि०	२७	२७	०	०	०	२७	१८	६	९

अश १०६।४० से १२० तक, २२६।४० मे २४० तक और ३४६।४० से ३६० तक बुध का प्रभाव रहता है।

केतुमहादशा का अन्तर्दशाचक्र

(अश्विनी, मघा, मूल नक्षत्रों पर)

ग्र०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	गु०	श०	बु०
व०	०	१	०	०	०	१	०	१	०
मा०	४	२	४	७	४	०	११	१	११
दि०	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७

डिगरी ०० से १३।२० तक, १२० से १३३।२० नक और २४० से २५३।२० तक केतु का प्रभाव रहता है।

शुक्रमहादशा का अन्तर्दशाचक्र

(भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा नक्षत्रों पर)

ग्र०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	गु०	श०	बु०	के०
व०	३	१	१	१	३	२	३	२	१
मा०	४	०	८	२	०	८	२	१०	२
दि०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अंशादि १३।२० से २६।४० तक, १३३।२० से १४६।४० तक और २५३।२० से २६६।४० तक शुक्र का प्रभाव रहता है।

दशा-फलादेशका सूक्ष्म विचार

प्रत्येक राशि मे तीन-तीन ग्रहों के नक्षत्र होते हैं। जैसे मेषराशि का स्वामी मंगल है जिसका सम्बन्ध अश्विनी नक्षत्र के स्वामी केतु, भरणी के शुक्र और कृत्तिका के प्रथम चरण के स्वामी सूर्य से है। इन तीनों ग्रहों में भिन्न-भिन्न गुण हैं। जहा सूर्य सात्विक और शुक्र राजस है वहां केतु तामस है। इसी प्रकार बारह राशियों के भी ऐसे ही तीन-तीन गुण होते हैं। किन्तु मेष का स्वामी मगल इन अन्य ग्रहों पर अपनी प्रधानता रखता है। अतएव स्पष्ट है कि महादशा, अन्तरदशा का फल कहना उतना सुगम नहीं। जब दैवज्ञ दशा, अंतर्दशा तथा उनके राशि-स्वामीयों का पूर्ण विचारकर फल कहेगा तभी वह ठीक-ठीक घट पायेगा।

यथा—किसी जातक की गुरु की महादशा चल रही है और उसकी जन्मकुण्डली में गुरु पुष्य नक्षत्र के चतुर्थ चरण मे उच्च का पड़ा है। गुरुमहादशा १६ वर्ष की होती है। पुष्य नक्षत्र का स्वामी शनि और राशिस्वामी चन्द्र है। अतः गुरु के पुष्य नक्षत्र ४ चरण पर शनि का प्रभाव रहेगा॥ इसलिए इसका फल यह कहना होगा कि गुरु महादशा के आदिम १२ वर्ष श्रेष्ठ होंगे और अन्तिम ४ वर्ष शनि के होने से कष्टकर होंगे। गुरु में चन्द्र की अन्तरदशा बहुत उन्नतिकारक और परिवर्तनशील होगी। यदि जन्म मे गुरु पुष्य के प्रथम चरण का हो तो शनि का अशुभ प्रभाव पहले ४ वर्ष और बाद में गुरु की १२ वर्ष की दशा-अन्तर्दशा श्रेष्ठ होगी।

दशाफल में गुणों की प्रधानता

(१) सात्विक ग्रह अपनी दशा के प्रथम-द्वितीय चरणों में श्रेष्ठ फल देते हैं। राजस ग्रह प्रथम चरण की दशा मे ही श्रेष्ठ प्रभाव रखते हैं। तामस गुणवाले ग्रह तीसरे चरण मे फल देते हैं। वे दूसरों के गुण के साथ नहीं रहते जब कि वे अपने ही गुणवाले नक्षत्रों मे हो।

(२) ग्रहों के गुण की प्रधानता—यदि कोई ग्रह सात्विक गुण ग्रहणकर चन्द्र नक्षत्र पर आता है तो उस ग्रह का उच्चाश हो जाता है। उस ग्रह नक्षत्र के अनुसार गुरु राजस गुण का फल देता है।

(३) शनि किसी नक्षत्र पर हो, या अपने नक्षत्रों मे या शुक्र, मंगल के नक्षत्रों में हो तो उच्चाश होता है। वहाँ शनि ग्रह अपनी दशा का प्रभाव प्रथम चरण की दशा में दिखायेगा और बाद के चरणों में उस नक्षत्र के स्वामी का फल होगा। प्रथम या चतुर्थ चरण के उच्च स्थान में ग्रह स्थित हों तो अपने चरणों की दशा में ही फल देते हैं।

(४) गुरुग्रह रोहिणि नक्षत्र का हो तो वह राजस गुणवाला हो जाता है। उसमे भी तीन चरणों तक वह राजस फल और चतुर्थ में सात्विक फल देता है।

नीचे इसके पाँच उदाहरण दिये जा रहे हैं—(१) जैसे मीन लग्नवाली कुडली में गुरु कर्क मे उच्च और पुष्य नक्षत्र का हो, जिसका स्वामी शनि है। गुरु पुष्य के चतुर्थ चरण का है जिसकी दशा १६ वर्ष की है। यहाँ गुरु अपनी दशा का फल, तीन चरणों मे १२ वर्ष तक अच्छा देगा और चतुर्थ चरण का फल, जिसका स्वामी शनि है, ४ वर्ष तक पचमभाव मे गुरु होने से सन्तानपक्ष को पीडाकारक रहेगा।

(२) किसी कुडली के अष्टम भाव पर बुध धनुराशि में मूल नक्षत्र के तृतीय चरण मे स्थित हो, जिसका स्वामी केतु है, तो बुध महादशा के १७ वर्ष में से ८॥ वर्ष के प्रथम-द्वितीय चरणों में वह उन्नतिकारक एव अच्छा फल देगा। किन्तु तृतीय-चतुर्थ चरणों में शेष ८॥ वर्ष तक उसकी दशा का फल केतु के प्रभाव से बुरा होगा। यहाँ बुध अष्टम भाव में स्थित होने से मृत्युतुल्य कष्ट देगा और फिर जातक ठीक हो जायगा।

(३) कुंभ लग्नवाली कुडली में सिंहराशिपर सप्तम चन्द्र मघा नक्षत्र के द्वितीय चरण का हो, जिसका स्वामी केतु है। यहाँ नवाशा पर वह उच्चाश पाता और राजस गुणवाला होकर अपनी दशा मे अच्छा

फल देता है। चन्द्र अपनी दशा के १० वर्ष मे से प्रथम चरण मे २॥ वर्ष तक अच्छा फल देगा और २॥ वर्ष द्वितीय चरण मे केतु का प्रभाव नेष्ट रहेगा। बाद के पाच वर्ष मे उच्चाशा, नवांश राजस चन्द्र का फल अच्छा रहेगा।

(४) वृश्चिक लग्न की कुंडली मे नवम भाव पर बुध आश्लेषा नक्षत्र के तृतीय चरण का है, जिसका स्वामी बुध ही है। ऐसी स्थिति मे बुध की महादशा के १७ मे से प्रथम चरण या आरम्भ के ४। वर्ष अच्छे रहेंगे। द्वितीय चरण मे आगे के ४। वर्ष तक वह राजस फल देगा। बाद तीसरे चरण मे अष्टमेश होने से अपना अच्छा प्रभाव नष्ट कर देगा और चतुर्थ चरण में भाग्योदय का योग बना देगा।

(५) मीन लग्न की कुडली मे उच्च का गुरु पुष्य के चतुर्थ चरण मे और उच्च का शनि अष्टम मे स्थित है। दोनों ग्रह उच्च के हैं। कभी-कभी नक्षत्रभेद से दूसरे ग्रह भी मध्य दशा में प्रभाव डालते हैं और उनकी दशा-अन्तर्दशा मे अच्छा फल प्रदर्शित करते हैं। यदि कोई ग्रह नक्षत्रस्वामी के साथ हो तो उसकी दशा के साथ भी उसका सम्बन्ध होता है और सम्बद्ध ग्रह उसकी अन्तरदशामें भावानुसार श्रेष्ठ फल देता है। उपर्युक्त गुरु का नक्षत्रस्वामी शनि, जो अष्टम में स्थित है, गुरु महादशा के अन्तिम ४ वर्षों में अपना फल बुरा देगा। यदि गुरु पुष्य के तृतीय चरण का और बुध एवं शनि के साथ हो तो वैसी स्थिति मे गुरु की अन्तर्दशा मे बुध के साथ जब शनि आये तो उस समय अधिक कष्ट देगा और दूसरे चरण के ४ वर्ष मे गुरु का फल श्रेष्ठ होगा। तृतीय मे ४ वर्ष शनि के साथ बुध होने से बुरा फल देगा।

ग्रहों के गुणानुसार दशाविचार

कोई ग्रह अपने दशाकाल मे जब अपने नवांश मे जिस ग्रह के गुण पर हो तो उसीके गुणानुसार श्रेष्ठ या मध्यम फल देंगे। साथ ही

वे अलग नवांश ग्रहों के साथ फल देंगे। जैसे—सूर्य अश्विनी, मघा, मूल मे होता है तो केतु का प्रभाव नक्षत्र पर रहता है। चन्द्र का रोहिणी, हस्त और श्रवण मे और गुरु का पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा में उच्चांश योग होता और वह राजस गुणानुसार फल देता है। किन्तु इन ग्रहों का अलग-अलग चरणों में भी एक-सा ही फल होगा। जब ये ग्रह केतुनक्षत्र मे होते हैं तो राजस-तामस गुणमिश्रित फल देते हैं। गुरु की दशा मे यह सात्विक-राजस और चन्द्र मे राजस-राजस फल देगा। श्रेष्ठ फल देने में सूर्य का राजस-राजस, दूसरा सात्विक-राजस और अन्त मे तामस-राजस फल उत्तम होंगे। नक्षत्रों के स्वामी किस प्रकार अपने गुणानुसार फल देते हैं, यह निम्नलिखित उदाहरणों से स्पष्ट हो जायगा।

(१) धनलग्न से सूर्य दशम भाव में हस्त नक्षत्र का है जिसका स्वामी चन्द्र है, जो अष्टमेश भी है। यहां सूर्य राजस-राजस फल देगा।

(२) इसी लग्न में यदि सूर्य नवम भाव में पुनर्वसु नक्षत्र का हो तो उस नक्षत्र के स्वामी गुरु के सम्बन्ध से वह सात्विक-राजस होगा। वह छटे भाव का स्वामी होता हुआ भी अच्छा ही फल देगा।

(३) ग्रहों की महादशा और अन्तर्दशा मे भी मित्र-शत्रु ग्रहों का प्रभाव होता है। जो ग्रह मित्रभाव और शत्रुभाव के नक्षत्रों के स्वामी हों वे उसीके अनुसार फल देंगे। जैसे—शनि श्रवण नक्षत्र का है, जो तामस ग्रह चन्द्र के नक्षत्र मे शत्रु ग्रह के साथ सम्बद्ध है। अतः यहा शनि चन्द्र की अन्तरदशा में शत्रुवत् अशुभ फल देगा। यदि शनि मूल नक्षत्र का हो तो उसका स्वामी केतु मित्रग्रह है। अतः शनि महादशा में केतु की अन्तर्दशा अच्छा फल देगी।

जन्मकुडली मे यदि एक ग्रह अपने मित्र ग्रहों के साथ हो तो उसका फल निम्नलिखित होगा—यदि शुक्र आश्लेषानक्षत्र के स्वामी बुध में हो तो वह उच्चांश पाकर बुध का मित्र हो जाता है। स्वामी नक्षत्र का राहु भी शुक्र का उच्चांश मित्रग्रह है। इस तरह मित्रग्रह भी श्रेष्ठ फल देते

हैं। शुक्र के मित्र राहु-बुध हैं जिनमे बुध सात्विक ग्रह है। राहु की अन्तदशा में बुरी सगति से बुरा फल और बुध अच्छा बुरा दोनों प्रकार का फल देगा। नक्षत्रस्वामी भावगत ग्रह को पूरी शक्ति से अपने स्वभाव और स्थान के अनुसार फल देते हैं। नीचे पांच उदाहरणों द्वारा इसीका विवरण किया जा रहा है।

(१) किसी कुडली मे तुला-लग्न मे मंगल ज्येष्ठा नक्षत्र पर वृश्चिक राशि का और नक्षत्रस्वामी बुध लग्न मे हो तो वहाँ मंगल स्वगृही और बुध लग्न में होने से दिग्बली हो जाता है। अतः मङ्गल की महादशा में जब-जब बुध की अंतर्दशा आयेगी तब-तब पराक्रम द्वारा उत्तम द्रव्यलाभ होगा। यदि बुध लाभभाव मे हो तो वह सिंहराशि का होने से जातक पहले से ही धनाढ्य रहता है, फिर जब मंगल की महादशा और बुध की अन्तर्दशा आयेगी तो और भी धनाढ्य होकर मान-सम्मान तथा भाग्योदय का भागी होगा। इस प्रकार जिस ग्रह की दशा प्रारम्भ हो उसका स्थान, बल स्वगृही, उच्चांश, दृष्टि, नक्षत्रस्वामी और उनके गुणों का विचार पहले कर लेना चाहिये। साथ ही भाव का 'जीव', 'शरीर' भी देख दशा से जो समय प्राप्त हो उसी वर्ष उस ग्रह का फल बताना चाहिये।

(२) मान लीजिये, अपने को नवम भाव का विचार करना है। किसीका कर्क लग्न हो और चन्द्र दशम मे मेष का अश्विनी नक्षत्र में और नवमेश गुरु सप्तम में मकर का श्रवण मे हैं, जिसका स्वामी चन्द्र है। नवम भाव का "जीव" चन्द्रग्रह है जो अश्विनी मे उसके स्वामी केतु ग्रह से सम्बद्ध है जिसका गुण तामस है। अतः चन्द्रमहादशा में केतु का अन्तर आने पर दशम भाव से पिता का मरणयोग बताया जाय।

(३) जैसे सिंह लग्नकी कुण्डली मे दशमभाव का स्वामी शुक्र श्रवण नक्षत्र पर छठे भाव में हो तो चन्द्र ग्रह इस भाव का जीव हुआ। चन्द्र नवमभाव मे अश्विनी पर है जिसका स्वामी केतु भी तामसस्वभाव है। अतः यह जातक चन्द्रदशामें नोकरी से अलग हो जायगा।

(४) किसी कुडली में धन लग्न से सप्तमभाव देखना है। यहा बुध श्रवण का दूसरे भाव मे और चन्द्र अश्विनी का पंचम मे बैठा है। सप्तमेश बुध के नक्षत्र श्रवण का स्वामी चन्द्र ही है। अतः इस भाव का जीव चन्द्र हुआ, जो अश्विनी में केतु का है। इसलिए यहा चन्द्र की महादशान्तर्गत केतु की अन्तर्दशा में स्त्री का मरण होगा।

(५) अब धन और सप्तम भाव का निर्णय देखिये। सिंहराशि की लग्नकुण्डली मे हस्त नक्षत्र पर कन्या का बुध और चन्द्र पचम में मूल नक्षत्र का है। शनि छठे स्थान में श्रवण नक्षत्र पर है। तब सप्तमेश शनि के नक्षत्र श्रवण का स्वामी चन्द्र "जीव" होता है। धनेश बुध हस्त का चन्द्र ही होता है। इसलिए दोनों भावों का जीव चन्द्र ही हुआ। दोनों स्थानीय ग्रह स्वगृही हैं, किन्तु चन्द्र मूलनक्षत्र में केतुग्रह का है। अतः चन्द्र महादशा की केतु की अन्तर्दशा में स्त्री द्वारा धन की हानि होगी। इसी प्रकार सभी भावों का विचार करना चाहिये।

अन्तर्दशा-प्रत्यन्तर्दशा विचार

समय का परिवर्तन मनुष्य के जन्मकाल की दशा अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा से मालूम पड़ता है। जन्मकुडली मे जो ग्रह जिस भाव में बैठा हो उसीके नक्षत्र और उसके चरण के अनुसार दशा का फल होगा। अन्तर्दशा और प्रत्यन्तरदशाका फल कहने से पूर्व इन बातों का विचार कर लिया जाय कि वह ग्रह किसी दूसरे भावों का स्वामी होकर दूसरे ग्रह के किस नक्षत्र पर है, चरणभेद से किस राशि पर स्थित है और वह शुभ या पापग्रह से युक्त है?

जैसे—मंगलग्रह भरणी नक्षत्र के १ चरण में स्थित है तो यहाँ राशि मेष ही होगी और अश्विनी नक्षत्र के चारों चरणों में भी मंगल का फल होगा। यहाँ पापग्रह का विचार किया जाता है। और शुभग्रह गुरु भरणी के प्रथम चरण मे हो तो उसी चरण से उस ग्रह की दशा का फल माना जायगा।

समय-परिवर्तन का योग मनुष्य को राजा से रंक और रंक से राजा बना देता है। जैसे वृश्चिक लग्न की कुंडली मे ज्येष्ठा का सूर्य लग्न मे है। मीन का चन्द्र रेवती नक्षत्र का पचमभाव मे और आश्लेषा का उच्च गुरु नवम भाव मे है। इन ग्रहों के नक्षत्र ज्येष्ठा, रेवती, आश्लेषा का स्वामी बुध ही है जो ग्रह त्रिकोण मे है। ऐसी स्थिति में बुधग्रह ही परिवर्तनयोग का कारक है। बुध की महादशा मे सूर्य के अन्तर और चन्द्र-गुरु को प्रत्यन्तर के समय इन ग्रहों के अनुसार ही अच्छा-बुरा परिवर्तन होता रहेगा। उपर्युक्त योग धनकारक होकर भी बुध उसे नष्टभ्रष्ट कर देता है, कारण वह अष्टमेश और लाभेश है। फलतः वह उच्चपद से नीचे गिराता है।

मिश्रित ग्रहों की दशाओं का दृष्टियोग

यदि दशाधिपति दूसरे ग्रहों के साथ हो और वे पापी और शत्रुग्रह हों, साथ ही नक्षत्रस्वामी भी शत्रु और पापग्रह हो तो दशा के प्रथम भाग मे बुरा या मध्यम तथा बाद की दशा मे अच्छा फल देगा।

दशाधिपति शुभ ग्रह से युक्त, शुभग्रह के नक्षत्र मे तथा शुभ और पापग्रह का साथी या उनकी उसपर दृष्टि हो तो दशा का फल आरंभ मे अच्छा होकर बाद मे ग्रहानुसार मिश्रित या बुरा होगा।

(१) बुधग्रह की दशा मे मिश्रित फल का एक उदाहरण देखिये। बुधग्रह उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र का हो और उस नक्षत्र का स्वामी सूर्य यदि राहु के साथ हो, तो पापग्रह के साथ सूर्य के होने से बुध की महादशा मे आरम्भ से अच्छा फल होकर सूर्य की अन्तर्दशा मे जातक उन्नति करेगा। किन्तु बाद मे राहु के अन्तर-प्रत्यन्तर मे अचानक कोई घटना घटकर नौकरी छूटना, बेकारी और अन्य कष्ट उठाने पड़ेगे, जबतक कि राहु का अन्तर रहेगा।

(२) यदि गुरु महादशा शतभिषा नक्षत्र की हो और उसका स्वामी राहु उच्च चन्द्र के साथ हो तो वहाँ गुरुदशा के अर्द्धभाग तक जीवन गरीबी के

साथ बीतेगा। बाद में उसकी ८ वर्ष की दशा उन्नतिकारक होगी। उसके साथी राहु और चन्द्र अन्तर-प्रत्यन्तर्दशा में श्रेष्ठ-नेष्ठ फल बतलायेंगे।

इस प्रकार किसी ग्रह की महादशा, अन्तर्दशा या प्रत्यन्तर दशा का फल कहते समय उपर्युक्त क्रम से साधक-बाधक का सूक्ष्म विचार करके ही उनका फल बताना चाहिये। यह विशुद्ध अभ्यास और अनुभव का विषय है, अतः इससे अधिक स्पष्टीकरण सभव नहीं। हाँ, विचार की दिशा बता दी गयी है। विज्ञ दैवज्ञ इसी मार्ग को पकड़कर आगे बढ़ेंगे तो उन्हें नयी-नयी बात अनुभव में आने लगेगी।

यहाँतक इस द्वितीय प्रकरण द्वारा जन्माङ्गनिर्माण और तदङ्गभूत ग्रह-भावादि स्पष्टीकरण एव दशाविवेचन किया जा चुका। अब क्रमशः लग्नादि द्वादश भावों को लेकर प्रत्येक पर नक्षत्रानुसारि विचार किया जायगा।

द्वितीय प्रकरण समाप्त

तृतीय प्रकरण

[तनुभाव-विचार]

जन्मकुण्डली के १२ स्थानस्थित ग्रहों से निम्नलिखित बातों का विचार किया जाता है :—१ तनु, २ धन, ३ सहज पराक्रम, ४ सुख, माता, ५ सन्तान, विद्या, ६ शत्रु, मामा और नाना ७ जाया, व्यापार, ८ मृत्यु, आयु, ९ धर्म, भाग्य, १० कर्म, राजयोग और पिता, ११ आय, लघुभ्राता, १२ व्यय, चिन्ता। मानवजीवन मे इन्हीं द्वादशभावो की बातें विचारणीय होती है। इन्हींसे पता चल जाता है कि किसका जीवन कैसा बीतेगा। क्योंकि सभी ग्रहोपग्रह त्रिगुणात्मक और त्रिभावात्मक हैं तथा मनुष्य अपने पूर्वकर्मों के अनुसार ही विभिन्न जन्म ग्रहण करता है। उसके जन्म के समय त्रिगुणात्मक और त्रिभावात्मक सूर्यादि ग्रह उन्हीं स्थानोंमे आ बैठते है, जैसा उसका भाग्य होता है। मानव का यह भाग्य भी उसके पूर्वकर्मानुसार ही बनता है। फलोन्मुख कर्म को ही भाग्य कहते हैं। एक दृष्टि से हम अपने भाग्य के स्वयं निर्माता हैं। यदि शुभ कर्म करते रहेंगे तो हमारा भावी भाग्य तो बन ही जायगा, इस जन्म के दुर्भाग्य को भी यथा-सभव दबा सकते हैं। सृष्टि मे मानव का बहुत बड़ा अधिकार है, उसका उसे अच्छा से अच्छा उपयोग करना चाहिये।

जन्मकुण्डलीस्थ चार त्रिकोण

चार केन्द्रो द्वारा ही त्रिकोण बनते हैं और मनुष्य इसी त्रिकोण में आकर जन्म लेता है। जन्मकुण्डलीस्थित इन चार त्रिकोणों का विवरण निम्नलिखित है।

(१) त्रिकोण—यह त्रिकोण लग्न, पचम और नवम भावों से बनता है। इसमे उत्पन्न जातक नवम से भाग्य को साथ में ले, पचम से विद्या, बुद्धि द्वारा वर्ष २० या २५ वर्ष के बीच ससार में उन्नतिशील बन जाता है।

(२) त्रिकोण- -यह त्रिकोण दशम, द्वितीय और षष्ठ भावों से बनता है। जब प्रथम त्रिकोण से जातक विद्या-बुद्धि प्राप्त कर लेता है तो फिर उसे कर्म करने की आवश्यकता होती है। २५ से ५० वर्ष के मध्यतक नौकरी, व्यापार आदि से धनसग्रह, कई शत्रुओं का सामना, मुकदमे बाजी में द्रव्यव्यय आदि कार्य उसके पीछे लगे रहते हैं। इसीके बीच वह तीसरे त्रिकोण का भी भोग करता हुआ सुख प्राप्त करता रहता है।

(३) त्रिकोण—यह त्रिकोण सप्तम, तृतीय और एकादश भाव से बनता है, जब ५० वर्ष तक इनका सुख प्राप्तकर उसे इनसे हटना पडता है, पराक्रम न होने से स्त्री भी दूर भागती और द्रव्यलाभ भी कम होता है। इसका प्रभाव वर्ष ५० से ७५ तक रहता है जो ग्रहानुसार शीघ्र या विलम्ब से अवश्य होता है।

(४) त्रिकोण—यह त्रिकोण चतुर्थ, अष्टम और द्वादश भावों से बनता है। इस त्रिकोण के समय वृद्धावस्था आ जाती है और मानव एक स्थान, जायदाद मकान, सवारी तथा मातृवत् सुख की इच्छा करता है। खर्च करने के लिए द्रव्य की आवश्यकता होती है। किन्तु द्रव्य होने पर भी सुखी न होने से दुःखी हो मृत्यु की प्रतीक्षा करता रहता है। इन्हीं स्थानो से मृत्यु पाकर मानव दूसरा जन्म ग्रहण करता है। उपर्युक्त केन्द्रगत त्रिकोण बहुत विचारणीय है। द्वादश भाव इन्हींमें बधे हैं।

तनुभाव से विचारणीय विषय

इन १२ भावोंमें प्रथम तनुभाव से मनुष्य का स्वभाव, सिर की स्थिति स्वरूप जीवन घटना, मान-प्रतिष्ठा का विचार करना चाहिये। अब नक्षत्रानुसारी जातकफल कहते हैं।

नक्षत्रानुसारी जातकफल

त्रिगुण और त्रिलिङ्ग इन २७ नक्षत्रों में प्रत्येक के ४ चरण होते हैं। प्रसगतः यहां प्रत्येक चरण मे उत्पन्न जातक मे कौन-कौन-सी विशेषता पायी जाती है, इसका विवेचन किया जा रहा है। निम्नलिखित फल इन पक्तियों के लेखक द्वारा अनेकत्र अनुभूत हैं। यहा प्रत्येक नक्षत्र के आगे चरणों के १, २, ३, ४ अंक देकर उनमे उत्पन्न जातक का विशेष फल लिखा गया है।

अश्विनी—(१) विचारशील, शिक्षक, स्पष्टवक्ता, सुखी किन्तु गृहकलहकर्ता। (२) ज्योतिष कार्यकर्ता या ज्योतिर्वेत्ता, सत्परामर्शदाता, किन्तु अर्शरोगी। (३) दूसरों की सलाह माननेवाला, पुराणेतिहासज्ञ तथा सुलेखक। (४) ज्योतिषकार्य मे निपुण, चंचल-प्रकृति, ईमानदार और बुद्धिमान्।

भरणी—(१) बलवान्, शत्रुविजयी, चित्रकार या कलाकार। (२) मानसम्मानभोगी, सतर्क, धार्मिककार्यरत, कर्मकाडी और प्रतिभाशाली। (३) शरीर से बलवान्, भाग्यशाली, प्रसन्नचित्त और चित्रकलाप्रवीण। (४) चंचल-प्रकृति, धोखेबाज, क्लर्की मे चतुर, उन्नतिशील।

कृत्तिका—(१) स्वधर्मनिपुण, विद्याभिलाषी, पशुप्रेमी, कर्मकाण्डी किन्तु अस्वस्थ। (२) वेदपुराणज्ञ, वेदान्ती, योगक्रियाविज्ञ या साधु-संसर्गी (३) वीरता के कार्य मे आहत होनेवाला, धार्मिक कार्य मे उन्नतिशील, अधिकारी, अकस्मात् आहत होनेवाला। (४) निर्धन से धनवान् होनेवाला, अस्वस्थ, लड़ाई झगड़ों का निर्णायक।

रोहिणी—(१) सगीतप्रवीण, स्वच्छताप्रिय, आश्चर्यभाषी तीव्र मनोगति। (२) धर्मसिद्धातज्ञ, प्रामाणिक कार्यकर्ता, सद्विचारशील, प्रसन्नमुख। (३) अक बीजगणित मे निपुण, ऐन्द्रजालिक, संगीतप्रेमी,

विचारशील। (४) मानप्रतिष्ठेच्छुक, सत्यभाषियों का प्रेमी और असत्यभाषियों से घृणा करनेवाला, ईमानदार।

मृगाशिरा—(१) धनवान्, वंचना द्वारा द्रव्य पानेवाला, अविश्वासी, वाणिज्य-व्यापारी। (२) प्रामाणिक कार्यकर्ता, उन्नतिगामी, अधिकारी के काम में निपुण। (३) ईश्वरभक्त, उत्सवादि कार्यप्रेमी, धार्मिक सिद्धान्तज्ञ, न्यायप्रिय। (४) प्रतिभाशाली, धार्मिक, बुद्धिमान्, वाणिज्य-कार्यनिपुण और विचारशील।

आर्द्रा—(१) स्वच्छहृदय, सबसे प्रेमव्यवहार करनेवाला, औषध-विक्रेता या वैद्य, श्रेष्ठ कार्यकर्ता। (२) कलाकार, उन्नतिशील, बुद्धिमान्, तेजस्वी। (३) अस्वस्थशरीर, पूर्वकृत कामों पर विचार करनेवाला, कभी-कभी अपमानजनक कार्य करनेवाला, साधारण आर्थिकस्थितियुक्त। (४) सम्बन्धियों से विवादकारी, गन्दा, ओछा, अदूरदर्शी अवनतिशील, एक स्थान पर नौकरी न करनेवाला।

पुनर्वसु—(१) विचारपूर्वक कार्यकर्ता, सुप्रतिष्ठित, शिक्षक, मेधावी। (२) आलसी, हाथ पैरों की पीडा से त्रस्त। (३) दन्तरोगपीड़ित, वृद्धावस्था में सुखी, गृहकार्यनिपुण, उन्नतिशील। (४) स्वच्छ वस्त्र का इच्छुक, उच्चाभिलाषी, अध्यक्ष पद प्राप्त करनेवाला, अभिमानी।

पुष्य—(१) अस्वस्थ, बुद्धिमान्, चतुर, कार्यों में सफलता पानेवाला। (२) आलसी, दूसरो से सामना करनेवाला, कार्य मे असफल तथा कार्य-सिद्धि मे दक्ष। (३) सम्बन्धियों से प्रेम करनेवाला, बुद्धिमानी से कार्य करनेवाला, मशीनरी की वस्तुओं से लाभ पानेवाला, सर्जरी कार्य में निपुण। (४) मित्रों से विरोध करनेवाला, अन्य लोगों से प्रेम करनेवाला, लोहे की वस्तुओं के क्रय विक्रय से लाभ पानेवाला।

आश्लेषा—(१) धनवान्, स्त्रीप्रेमी, कामशक्ति में कमजोर, हसी-मजाक मे निपुण, दूसरों का कार्य करने मे तत्पर। (२) स्वच्छताप्रेमी, धार्मिक कार्यों में अग्रसर, अकस्मात् आहत होनेवाला। (३) कभी कभी

चोरी करनेवाला, अच्छे मित्रो की सगति से उपदेश का भागी, आलसी। (४) स्त्री के कष्ट से पीड़ित, प्रेमव्यवहार मे श्रेष्ठ, छोटे मनुष्यो से मित्रता करनेवाला, अस्वस्थ।

मघा—(१) लाल आखोंवाला, दूसरों को बाते समझनेवाला, अकस्मात् हानिभोगी, गुप्तरीति से लाभ पानेवाला, क्रोधी। (२) चोरी से हानि पानेवाला, कान का रोगी, सुस्त काम करनेवाला, तेज आवाजवाला, प्रबल कामी। (३) पुष्टशरीर, दूसरे के धन पर अधिकार करनेवाला, ईमानदार, किन्तु उन्नति मे बाधा पानेवाला। (४) स्त्री पर हुकूमत करनेवाला, अप्रसन्नचित्त, चर्मरोग से पीडित, चिन्ता से ग्रस्त।

पूर्वाफाल्गुनी—(१) धार्मिक सस्थाओं मे कार्यकर्ता, वीरकर्म मे निपुण, व्यापार मे उन्नतिशील। (२) कृषिकार्य मे बुद्धिमान्, क्रयविक्रय मे हानि पानेवाला, कार्य मे रुकावट का शिकार। (३) मानसम्मानभोगी, विचारशील, चित्रकलाप्रवीण, वीर्यसम्बन्धी रोग से ग्रस्त। (४) शरीर पर चोट के निशानवाला, धार्मिक कार्यों मे नास्तिक, स्वधर्म मे अश्रद्धायुक्त।

उत्तराफाल्गुनी—(१) सम्बन्धियो से प्रेमव्यवहार करनेवाला, प्रिय वचन बोलनेवाला, अपने काम मे चतुर। (२) कम द्रव्यवाला, थोड़े मे निर्वाह करनेवाला, मासभक्षी, उत्तम सगति से सुधार पानेवाला। (३) सत्यभाषी चौपायो के पालने से लाभ पानेवाला, धार्मिक कार्यों से उन्नतिशील। (४) छोटी उम्र मे माता-पिता से विहीन, पिछली बातो को याद रखनेवाला, बुद्धिमान्।

हस्त—(१) असत्यभाषी, अभिमानी, पशु आदि पालनेवाला, परिश्रमी। (२) माता से विहीन, नृत्य गायनप्रेमी, शीत-जुकाम रोग से ग्रस्त, लापरवाह। (३) पिता के कष्ट से पीड़ित, व्यापार मे लाभभोगी, अस्वस्थशरीर, चतुर। (४) लम्बे शरीरवाला, माता का अल्पप्रेमी, जहाजी काम मे चतुर, परिश्रम से उन्नति करनेवाला।

चित्रा—(१) नेत्ररोगी, अद्भुत कार्य करने मे चतुर, साधारण बातों पर विचार करनेवाला, सेनापति के कार्य मे निपुण। (२) शारीरिक बल बढाने मे यत्नशील, लम्बा कद, गरीब। (३) वीरता के कार्य करनेवाला, विद्याभ्यास का इच्छुक, प्रबल विचारशक्ति, सैनिक नौकर, उन्नति के योग्य। (४) शत्रुओं से सामना करने मे समर्थ, विजयी, अनुभवी कार्य करने मे इच्छुक।

स्वाती—(१) वीर, स्वप्नदर्शी, नेता, उच्चपदस्थ, भाग्यशाली। (२) पुष्टशरीर, तीव्र विचारशक्ति, सचाई के काम मे प्रसन्नचित्त, स्वस्थ। (३) क्रोधावेशमे हानि और शरीर में चोट पानेवाला, किसीके मत को न माननेवाला, उन्नतिमे बाधा का शिकार। (४) बारबार बात दुहरानेवाला, बुद्धिमान और चतुरता से काम करनेवाला, अपनी बात श्रेष्ठ माननेवाला।

विशाखा—(१) ज्योतिषकार्य में निपुण, विद्याप्राप्ति मे उन्नतिशील, व्यापार से लाभभोगी, विदेश-भ्रमणकारी। (२) अपने विचार गिरानेवाला, उन्नति मे बाधा पानेवाला, पेन्सिली, काले आर्ट चित्रको पसन्द करनेवाला, सचाई का इच्छुक। (३) लड़ाई करने में अग्रसर, किसीकी वस्तु को जबरन लेनेवाला, विचारहीन, बोलने मे चतुर। (४) भाषण देने मे चतुर, धनवान्, प्रबल विचारशक्ति, उन्नतिशील, दूसरों को अच्छी सलाह देनेवाला।

अनुराधा—(१) उच्च विचारवाला, ईमानदारी से कार्य करनेवाला, स्वधर्मप्रेमी, दर्शनशास्त्र और वेदाध्ययन में रुचिवाला (२) दूसरों के मत-मतान्तर को न माननेवाला, सगीत मे प्रवीण, विचारवान्, सम्मान पानेवाला। (३) धीरे से बोलनेवाला, काम में चतुर, कला मे निपुण, पढ़ने मे परिश्रमी। (४) अपने कार्य मे निपुण, उन्नतिशील, दूसरों की बात माननेवाला, उच्च कार्यकर्ता।

ज्येष्ठा—(१) अच्छा लेखक, अभिमानी, विलासी, भ्राता को कष्टकारी। (२) सगीतशास्त्र मे प्रवीण, बोलने मे तेज, अस्वस्थ, आलसी स्वभाव।

(३) आँखों का रोगी, पशुपालक, परिश्रमी, मित्रो का प्रेमी। (४) क्रोधी स्वभाव, कार्य मे विघ्नबाधा पानेवाला, स्वजनो का विरोधी, उन्नतिशील।

मूल—(१) बड़े आदमी की आज्ञा भंग करनेवाला, अपनी इच्छा से कार्य करनेवाला, पिता को कष्टकारी। (२) पढ़ने मे बुद्धिमान्, उदररोगी, दूसरो की बात न माननेवाला, प्रदेश-भ्रमणकारी (३) ऐन्द्रजालिक और तान्त्रिक विद्यामे निपुण, स्वच्छताप्रेमी, वस्त्रालंकार का प्रेमी, शत्रु विजयी, गर्दन मे दर्दवाला, औषधियों के क्रय-विक्रय से लाभ पानेवाला।

पूर्वाषाढा—(१) दूसरो से मान पानेवाला, मध्यावस्था मे सुख शाति भोगी, कामी और स्त्रीप्रेमी। (२) एकान्तप्रिय, दुर्बल शरीर; शुभ कार्य का इच्छुक, प्रबल गायनशक्ति (३) द्रव्यसग्रही, अल्प आयु मे पिता के कष्ट से पीड़ित, चिन्ताग्रस्त। (४) कार्य मे सफल, नीरोग, उन्नतिशील, लाभ पानेवाला।

उत्तराषाढा—(१) श्रेष्ठबुद्धि, चित्रकला मे निपुण, स्वच्छवस्त्रधारी, मानप्रतिष्ठाभागी। (२) भाषण देने मे चतुर, अल्प द्रव्यवाला, पुष्ट शरीर, प्रबल इच्छाशक्ति। (३) अभिमानी, असत्यभाषी, रुक-रुककर बात करने-वाला, अद्भुत स्वप्नदर्शी। (४) व्यापार पक्ष से लाभ पानेवाला, ठोस काम करनेवाला, गृहकार्यों मे निपुण, तीव्रबुद्धि।

श्रवण—(१) चचल, अभिमानी, मातृपितृभक्त, जलकल कार्य में निपुण। (२) मित्रविरोधी, सोच-विचारकर काम करनेवाला, द्रव्यसंग्रह कम करनेवाला। (३) धनवान्, व्यापार से लाभभोगी, उन्नतिशील, अस्वस्थ। (४) धार्मिक कार्य मे उत्साही, धनसम्पन्न, कृषि से द्रव्य पानेवाला।

धनिष्ठा—(१) सोच-विचारकर काम न करनेवाला, उन्नति के कार्य मे बाधा पानेवाला, सेनाविभाग मे नौकर। (२) लड़ाई-दंगे में आहत होनेवाला गरीब, श्रम से द्रव्य पानेवाला, स्त्रीप्रेमी। (३) ईमान-दारी से कार्य करनेवाला, स्वच्छवस्त्रधारी उन्नतिशील। (४) धार्मिक काम मे उन्नतिशील, क्रोधी, अभिमानी, लोहे की वस्तुओ से लाभ पानेवाला।

शततारका—(१) स्वच्छ-पवित्र कार्यप्रेमी, पशुपालनप्रेमी, धार्मिक कार्यों मे उन्नतिशील। (२) चचल स्वभाव, विना सोच-विचार के काम करनेवाला, कार्य मे हानि पानेवाला, मशोनरी कार्य करनेवाला। (३) अच्छे उच्च विचार से काम करनेवाला, उन्नतिभोगी। (४) उच्च काम करने मे बुद्धिमान्, सदाचारी, महात्माओं के सतसग और कृपा का पात्र।

पूर्वाभाद्रपदा—(१) पादरी, पुजारी, ईश्वरभक्त. स्त्री से वार्ता न करनेवाला, आरामपसन्द, पुष्ट शरीर। (२) काम में अनायास सफल धार्मिक कार्यकर्ता, उन्नतिशील कार्यकर्ता। (३) यात्री, प्रवासी कविता मे निपुण, बुद्धिमान्, चतुरतापूर्वक कार्यकर्ता। (४) ईमानदार, स्वस्थ शरीर, अध्यापक, वच्चों का प्रेमी, उन्नतिशील।

उत्तराभाद्रपदा—(१) बहुत चतुरता से कार्य करनेवाला, प्रसन्नचित्त, उन्नतिशील, स्त्रियों का प्रेमी, उदारचित्त। (२) सोच-विचार से काम करनेवाला, स्वर्ण-चादी का लेन-देन करनेवाला, अकस्मात् हानि का शिकार-शत्रु पक्ष की वृद्धि से युक्त। (३) अनुभवी योग पानेवाला, अनेक धार्मिक कार्य करनेवाला, आलसी, विद्याप्रेमी, राजकर्मचारियों का मित्र। (४) कवि, उच्च सत्कुलीन, श्रेष्ठ कार्य करनेवाला, राजप्रेमी।

रेवती—(१) विद्याप्रेमी, अकस्मात् चोट पानेवाला, स्वभावतः विरोधकारी, काम में चित्त न लगनेवाला। (२) सरल स्वभाव, विनम्रभाषी, सोच-विचारकर काम करनेवाला, तीर्थयात्री। (३) बुद्धि से काम न करनेवाला, प्रसन्नचित्त, गरीब, काम में रुकावट पानेवाला, एकान्त-वासी। (४) ईमानदारी के कार्य करनेवाला, शत्रुपर विजय पानेवाला, ईश्वरभक्त, पर्याप्त आध्यात्मिक शक्तिसम्पन्न।

उपर्युक्त नक्षत्रों की प्रकृति सत्व, रज और तम इन तीन गुणों से युक्त होने से नक्षत्रों के स्वामी की क्रियाए भी त्रिगुणात्मक हैं। इनका निर्णयकर ग्रहों की दशा और गुणों का भी विचारकर तदनुसार ही फल कहना चाहिये। सात्विक ग्रह अच्छा फल देते हैं, जबकि वे शुद्ध सात्विक

भावमें स्थित हों। राजसग्रह अपनी अवस्था पर हों तो वे भी श्रेष्ठ फलप्रद होंगे। किन्तु तामस ग्रह कभी अच्छा फल न देंगे। तामसग्रह कभी भी राजस प्रकृति नहीं बन सकते। यदि संयोगवश हो भी जायँ तो फल संतोषजनक नहीं होता। सात्विक गुणवाले ग्रह तामसी ग्रह और नक्षत्र से प्रभावित नहीं होते।

नक्षत्रों के नवमांश की विधि

लग्नराशि को नौ भागों में बांटने पर उसका प्रत्येक भाग 'नवांश' कहलाता है। प्रत्येक राशि में २। नक्षत्र और उनके ९ चरण होते हैं। जब लग्ननक्षत्र का प्रथम चरण होगा तो नवांश और लग्न का स्वामी भी वही ग्रह होगा। नीचे चक्र द्वारा नक्षत्रों का नवमांश सरलता से ज्ञात हो जायगा।

नवमांश नक्षत्रचक्र

१ अ. म. मू. रो. ह. पुन. वि. श्र. पूर्वाभा.	२	३
४	५ भ. पु. उत्तराभा० पूर्वाषा० मृ. चि. ध. पूर्वाफा० अनु.	६
७	८	९ उत्तराफा० कृ० उत्तराषा० आ० स्वा० शत. आश्ले. ज्ये. रे.
१०	११	१२

इस चक्र मे अश्विनी आदि ९ नक्षत्रों के नवांश, जिनके स्वामी केतु, गुरु, और चन्द्र हैं, मेष से कर्क पर समाप्त होते हैं। भरणी आदि ९ नक्षत्रों के नवांश, जिनके स्वामी शुक्र, मंगल और शनि हैं, पंचम स्थान सिंह से वृश्चिक तक रहते हैं। नवम धनराशि के नक्षत्रों को नवांश, जिनके स्वामी राहु, बुध और सूर्य हैं, धन से मीन तक होते हैं। जिस तरह नक्षत्रानुसार प्रथम नवांश अश्विनी के स्वामी केतु ग्रह से प्रारम्भ होता है उसी तरह सब नक्षत्रों के नवांश भी चक्रानुसार समझ लेने चाहियें।

अब प्रथम तनुभावस्थित सभी ग्रहों के पृथक्-पृथक् फल कहते हैं।

तनुभावस्थ ग्रहों के फल

सूर्य—तनुभाव में सूर्य होने से जातक का स्वास्थ्य अच्छा रहता है, किन्तु दृष्टि में कमजोरी और विशेष काम करनेपर नेत्रों में पीड़ा भी होती रहती है। किसी बात को सुनकर विश्वास न कर स्वयं ही प्रत्येक बात का अनुभव करना, सबसे हिल-मिलकर रहना, नाटक-सिनेमा खेल आदि से प्रेम, पिता से सादर बात-चीत करना तनुभावस्थ सूर्यवाले जातक में विशेष रूप से पाया जाता है।

चन्द्र—तनुभाव मे चन्द्र होने पर जातक को हर कार्य मे शंका उत्पन्न होती है। वह प्रथम सोचकर काम नहीं करता और बाद में पश्चात्ताप करता है। वह अपने अन्तर की बात प्रायः प्रकट किये देता है।

भौम—यदि तनुभाव मे मंगल हो तो जातक के शरीर पर किसी जगह घाव का चिह्न होगा, विशेषकर सिरपर। वह ज्वरादि से पीड़ित, अधिक उष्णतायुक्त शरीर होकर सदा लड़ाई झगड़े की इच्छा रखता है। वह साहसी और बलवान् होता हुआ भी क्रोधावेश से कार्य में हानि पाता है।

बुध—तनुभवास्थ बुध ग्रहवाला जातक भाषण मे बहुत तेज, प्रबल-बुद्धि, चतुरतापूर्वक कार्यकर्ता, पढ़ने लिखने में तेज, दीर्घायु, उपदेशक और सबका स्नेही होता है।

गुरु—तनुभावस्थ गुरु ग्रहवाला जातक यश, मान-प्रतिष्ठा पानेवाला, स्वास्थ्यसम्पन्न, सब कामों का जानकार, रूपवान् और स्वच्छ वस्त्र धारण करनेवाला होता है।

शुक्र—तनु, भावस्थ, शुक्रग्रहवाला जातक मंत्र, यंत्र-तंत्र का ज्ञाता, स्त्रियों और सुगंधित द्रव्यो का प्रेमी, दीर्घायु तथा हास्यविनोद मे चतुर होता है।

शनि—तनुभावस्थ शनिग्रहवाला जातक सन्तानपक्ष को पीड़ा कारक, रीढ़ का रोगी, बाल्यावस्था मे सदा रुग्ण, आलसी, काम करने मे बहुत समय लगानेवाला होता है।

राहु—तनुभावस्थ राहुग्रहवाला जातक दूसरों पर दबाव डालकर अपना काम साधता है। वह तेजस्वी, लाल आखोंवाला, क्रोधी और उच्च तथा प्रभावशाली वाणीवाला होता है।

केतु—तनुभावस्थ राहुग्रहवाला जातक आश्चर्यजनक स्वप्न देखनेवाला और भूत प्रेतादि की छाया से भयभीत होता है। वह अचानक पराक्रम द्वारा उन्नति कर लेता है।

नेपच्यून—तनुभावस्थ नेपच्यूनग्रहवाला जातक अस्वस्थ, अन्तरिक्ष-ज्ञानी, धार्मिक कार्यकर्ता, प्राणायाम और ध्यानयोग का अभ्यासी होता है।

हर्षल—तनुभावस्थ हर्षलग्रहवाला जातक दुराचारी, पाखंडी, हठी, दूसरो को मंत्र-तंत्र से वश मे करनेवाला तथा अभिमानी होता है।

सूर्यचन्द्र-राशिपरक तनुभावफल

सुदर्शनचक्रानुसार त्रिगुणात्मक जन्मकुंडली तीन प्रकार की कही गयी है—(१) लग्नकुंडली, (२) चन्द्र (राशि)-कुंडली और (३) सूर्य (आत्मा)-कुडली। यहाँ पर तनुभाव से सूर्य-चन्द्र का पूर्ण

सम्बन्ध है। अतः तनुभाव के विभिन्न राशिपरक इन दोनो ग्रहों का फल नीचे लिखा जा रहा है।

मेष—(चन्द्र) स्वस्थशरीर, कार्य मे सफल, बड़ों की आज्ञा का पालन करनेवाला और ईमानदार। (सूर्य)—स्वावलम्बी, उच्चविचार, राजसम्मान पानेवाला और धनी।

वृषभ—(चन्द्र) मत्र यत्र विद्या का ज्ञाता, कन्यासन्तान की विशेषता-वाला, उच्च पदवीधारी, महात्माओं की संगति पानेवाला और विपुल ज्ञानशक्ति। (सूर्य)—सगीतविद्या मे निपुण, विद्वान्, धनी, उच्च स्वरवाला, स्त्रीप्रेमी।

मिथुन—(चन्द्र) घुघराले बालोवाला, सोच-विचारकर काम करनेवाला, अभिमानी, स्वच्छ वस्त्रधारी। (सूर्य)—ज्योतिष और व्याकरण का ज्ञाता तथा जीवन मे दो बार विशेष हानि पानेवाला।

कर्क—(चन्द्र) बाग-बगीचा लगानेवाला, ज्योतिर्वेत्ता, प्रदेश मे भ्रमणकारी, प्रसन्नचित्त, उत्तम स्वास्थ्यसम्पन्न। (सूर्य)—चतुर कार्यकारी, विलासी, प्रबल इच्छाशक्ति तथा अल्पवित्त।

सिह—(चन्द्र) प्रबल इच्छाशक्ति, उच्च शिक्षा और पदवीधारी तथा उच्च विचारवाला। (सूर्य)—मानप्रतिष्ठासम्पन्न, धनी, कार्य-लाभयोगी, शासन के साथ श्रेष्ठ व्यवहारवाला और राजयोगयुक्त।

कन्या—(चन्द्र) संगीतविद्याप्रवीण; मधुरभाषी, स्त्रीप्रेमी, अल्पवित्त और विना सोचे कार्य करनेवाला। (सूर्य)—कलाकार, विद्याभ्यासी उत्तम लेखक तथा पुस्तक-प्रकाशक।

तुला—(चन्द्र) व्यापारिक उन्नति पानेवाला, धर्मकार्यज्ञ, स्त्री के कष्ट से पीड़ित और यात्राप्रेमी। (सूर्य)—जवाहिरात, सोना, चादी के व्यापार से लाभ पानेवाला, मद्यपानेच्छुक, चतुर और लाभ में बाधा पानेवाला।

वृश्चिक—(चन्द्र) माता-पिता से अलग रहनेवाला, छोटी उम्र में

रुग्ण, कमजोर दिमाग, कामशक्ति की कमजोर, मातृप्रेम से रहित । (सूर्य)—अकस्मात् रोगी, काम में उन्नति होकर रुक जानेवाला, वृषण वृद्धि और उदरपीडा से पीड़ित ।

धन—(चन्द्र) बुद्धिमान्, समझदार, अच्छे कार्य का प्रशंसक, पारितोषिक पानेवाला तथा उच्च शिक्षासम्पन्न । (सूर्य)—धनी, औषधि-क्रयविक्रयकारी, सत्यव्यवहारी ।

मकर—(चन्द्र) कमजोर दिमाग, उच्च कार्यों मे बाधा और रोक पानेवाला तथा वृद्धावस्था मे भाग्योदययोगी । (सूर्य)—अल्पायु, निर्धन, परधनभोगी, द्रव्यहानि पानेवाला ।

कुंभ—(चन्द्र) मानसिक चिन्तायुक्त, कार्य मे असफलता पानेवाला और मध्यावस्था मे श्रेष्ठ जीवनभोगी । (सूर्य)—अल्पवित्त, सन्तानपक्ष के कष्ट से पीड़ित तथा युद्ध में आहत होनेवाला ।

मीन—(चन्द्र) स्त्रीप्राप्ति का इच्छुक, दूसरों की जायदाद को पसन्द करनेवाला, ठडी वस्तु और भोजन पसन्द करनेवाला, गुप्त धन पानेवाला, आलसी, शत्रुभययुक्त और प्रथम कन्या सन्तानवाला । (सूर्य)—समझदार, उच्च कार्य मे सफल, दूर देशो की यात्रा करनेवाला, जहाज-समुद्री कार्यों से लाभ पानेवाला और प्रसन्नचित्त ।

अब नक्षत्रानुसारि तनुभावस्थ १२ राशियों का फल सोदाहरण लिखा जा रहा है ।

नक्षत्रानुसारि तनुभावस्थ राशिफल

अब नाड़ीज्योतिषानुसार तनुभाव के फल का विचार किया जा रहा है । तनुनामक इस प्रथम भाव से जीव का भी सम्बन्ध है । इसलिए कौन ग्रह शरीर का अधिपति और कौन जीव होगा तथा इन दोनो का सम्बन्ध किस तरह का है, प्रत्येक राशि की कुडली में इसका विचार करके ही उसका फल कहना चाहिये ।

मेष लग्न के तनुभाव का विचार

मेष लग्न के जातक के लिए सोमवार, रविवार और गुरुवार उत्तम होते हैं। यदि इन्हीं वारों के स्वामियों के नक्षत्रों मे कोई ग्रह हों तो वे अपनी दशा-अन्तर्दशाओं मे बहुत अच्छा फल दिखलाते हैं। मेष लग्नवालों के श्रेष्ठ ग्रह और नक्षत्र निम्नलिखित हैं—सूर्य और उसके नक्षत्र—कृत्तिका, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा। चन्द्र और उसके नक्षत्र—रोहिणी, हस्त, श्रवण। गुरु और उसके नक्षत्र—पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा।

यदि जातक के जन्मसमय मे चन्द्रनक्षत्र के अंश पर शुक्र हो तो वह सुस्ती से कार्य करेगा और उसका फल भी मन्दगति का होगा। यदि सूर्य गुरु के नक्षत्रों के अंश पर शुक्र हो तो मेष लग्नवाले को अच्छा फल देगा। अर्थात् वह उद्योग और परिश्रमकर तेजी से उन्नति करेगा। शेष अन्य ग्रह भी इन नक्षत्रों पर अच्छा ही फल देंगे।

उच्च ग्रहों का राजस-तामस गुण

यहा यह ज्ञातव्य है कि उच्चस्थ ग्रहों का उत्तम प्रभाव भी उस ग्रह के नक्षत्र नवांश और स्वामी के तामस गुण से सम्बद्ध होने पर नष्ट हो जाता और बुरा फल ही प्राप्त होता है। यथा—किसीके मेष लग्न में सूर्य और गुरु दोनों पड़े हैं, सूर्य अश्विनी और गुरु भरणी का है। यहाँ गुरु शुक्र के नक्षत्र में और सूर्य केतु के नक्षत्र मे पड़ा है। इनका सम्बन्ध शत्रुवत् और तामस गुणवाला है। अतः यहा उच्चस्थ सूर्य का बुरा ही होगा। सूर्य के मेष लग्न मे शुभप्रद होते हुए भी गुरु शुक्र का युद्धयोग होने से यहाँ फल अशुभ ही होगा। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी राजस-तामस योग देख फलादेश कहना चाहिये। सिवा हरएक की जन्मकुंडली मे दिग्बली ग्रहों का योग भी देखना चाहिये। अब मेषलग्नस्थ तनुभाव का उदाहरण-सहित विवेचन किया जा रहा है।
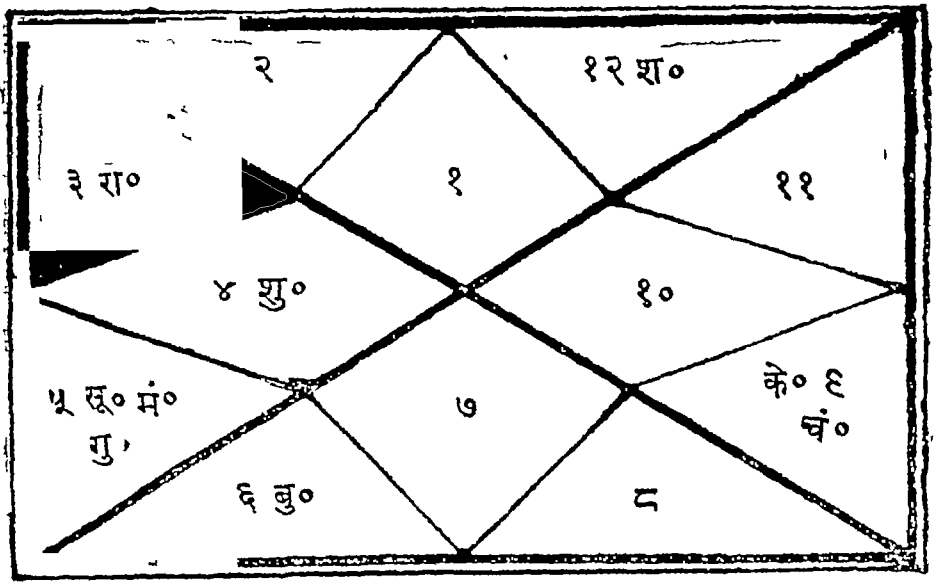
[मं० पूर्वाफा० १ । सू० पूर्वा फा० २ । शु० पुष्य । श० उत्तरा भा० । बु० उ० फा०]

जीव-शरीर ग्रहज्ञान—इस कुंडली मे मेष लग्न से सातवें भाव तुला का स्वामी शुक्र ग्रह का नक्षत्र पुष्य है जिसका स्वामी शनि जीवग्रह है। उत्तरा भाद्रपदा का स्वामी शनि स्वक्षेत्री होने से शरीर का स्वामी नहीं हो सकता, इसलिए शनि की राशि मीन का स्वामी गुरु शरीर-ग्रह होगा। इस तरह गुरु शरीरग्रह और शनि जीवग्रह हुए, दोनो का आपस में षडाष्टक योग है। अतः यह जातक राजसुख पूर्ण रीति से नहीं भोग सकेगा। यदि लग्नेश मंगल दिग्बली होकर दशम भाव में रहता तो राजसुख के भोक्ता होने का योग बनता। कुण्डली मे उच्च कन्याराशिस्थ बुध उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र का है जिसका स्वामी सूर्य है। अतएव इस जातक के लिए राजयोग बना। किन्तु शत्रु पक्ष द्वारा राज्य मे बाधा हुई, कष्ट और दुःख उठाते पड़े तथा बेकार खर्च करने का भी योग बना। इसी तरह शनि की पूर्ण दृष्टि होने से वह जातक का शरीर भी अस्वस्थ रखता है।

नेपच्यून का विशेष विचार

तनुभाव मे नेपच्यून (वरुणग्रह) के रहने पर जातक विचित्र स्वभाव, दूर की बात सुनने और देखनेवाला, वेदान्तज्ञ, स्वप्नद्रष्टा, सौन्दर्यप्रेमी संगीतज्ञ, कवि, परप्रेमी तथा प्रबल इच्छाशक्ति होता है। यदि यह ग्रह वहाँ पापग्रहों के साथ हो तो जातक शकालु, अस्थिरचित्त, व्यभिचारी, मद्यप, मादकवस्तुप्रेमी, समुद्री वस्तुओं से सम्बन्ध रखनेवाला तथा संकल्प विकल्पशील होता है। यह ग्रह गुरु के समान फल देता है। मान-प्रतिष्ठा और अधिकार बढाता है। इससे जातक आध्यात्मिक भविष्यवक्ता, स्वाभिमानी, ईश्वरोपासक और साधुसेवी होता है। मेषलग्न मे नेपच्यून होने से जातक क्लर्क, चंचल, चतुर, कवि, युक्ति से कार्यकर्ता, सुन्दर, धार्मिक कार्यकर्त्ता, अपनी इच्छा से काम करनेवाला और दयालु होता है।

हर्षल का विशेष विचार

यदि तनुभाव में हर्षल (प्रजापति) ग्रह अग्नि राशि (मेष) (१।५।९) का हो तो वह जातक हठी, साहसी, कार्य मे पूर्णता पानेवाला, उच्च विचार जल्दबाज, उग्रस्वभाव, विविध प्रकार की वस्तुओं का प्रेमी, ज्योतिषज्ञ, उच्च कार्यकर्त्ता और शास्त्रार्थ मे निपुण होता है। वह भूमिराशि (२।६।१०) पर होने से जातक कपटव्यवहारी, श्रेष्ठ भोजनकर्त्ता, शीघ्रक्रोधी और कामी होता है। वायुराशि (३।७।११) मे हर्षल होने पर जातक अभिमानी, चंचलबुद्धि, विद्वान्, गुप्त बातों की जाच करनेवाला, शीघ्रक्रोधी, बुद्धिमान्, सत्यभाषी तथा बातें अनसुनी करनेवाला होता है। जलराशि (४।८।१२) मे हर्षल होने पर जातक नीचस्वभाव, कपटी, प्रपंची, मध्यम संगति, तमोगुणी, विशेष कामी, दूसरों से द्वेष करनेवाला, स्वार्थसाधन मे तत्पर और व्यवहारशून्य होता है।

लग्न मे हर्षल होने से जातक ऊपर से देखने में साधारण मनुष्य-सा, किन्तु भीतर से विशेष गुणी होता है। फिर भी वह हठी, दुराचारी,

आडम्बरी, आध्यात्मिकशक्ति सम्पन्न, श्रेष्ठबुद्धि, उत्तम वक्ता; स्वभाव का उतावला, स्वतन्त्र विचार, असतोषी, किसीपर विश्वास न करनेवाला, निर्लज्ज, सम्बन्धियों से विरोध करनेवाला, चंचल मन और विचारवाला, मित्रों से सदा विरुद्ध और एकान्तवासी होता है। मेषराशि पर हर्षल के होने से जातक लम्बा कद, सुडौल और सुदृढ शरीर, पीले नेत्रवाला और गेहुंवे रंग का, सदा क्रोधी तथा अभिमानी होता है।

वृषभराशिक तनुभाव विचार

जिस जातक के तनुभाव में वृषभ लग्न हो उसके लिए बुधवार और रविवार उत्तम होते हैं। इस जातक के जन्मकालीन ग्रह केतु, शनि और राहु यदि बुध के नक्षत्र पर हों तो श्रेष्ठ फल देते हैं। बुध नक्षत्र—आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती; केतू नक्षत्र अश्विनी, मघा, मूल, राहु के नक्षत्र आर्द्रा, स्वाती, शताभिषा और शनि के पुष्य, अनुराधा तथा उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र है, यह पीछे बताया ही जा चुका है। सिवा कन्या, मकर, कुंभ और मिथुन राशियां भी वृषभ लग्नवालों के लिए उत्तम मानी गयी हैं।

उपर्युक्त नक्षत्रों के अंशों में वृषभ लग्न पर ग्रहों की स्थिति हो तो उन ग्रहों का फल अच्छा होगा। यदि सूर्य और शुक्र बुध के नक्षत्रों पर किसी भाव में हो तो जातक का उन्नतिकारक योग बनेगा।

वृषभ लग्न में नेपच्यून हो तो जातक कारीगर या कलाकुशल, विषय-वासना में रत, अधिक परिश्रमी, मित्रप्रेमी, गंभीर, प्रसन्नचित्त, द्रव्य-प्राप्ति का योगी, सौन्दर्यप्रेमी, व्यभिचारी, वैभवसम्पन्न और छोटे कद का होगा।

तनुभाव में वृषभ का हर्षल होने पर जातक छोटे कद का, सुदृढ, काले नेत्र, उठी पलकें और लम्बी गर्दनवाला, कामी, घूसखोर, प्रसन्न स्वभाव और विचारवान् होता है।

अब नीचे सोदाहरण वृषराशिक तनुभाव के फल का विचार किया जा रहा है।
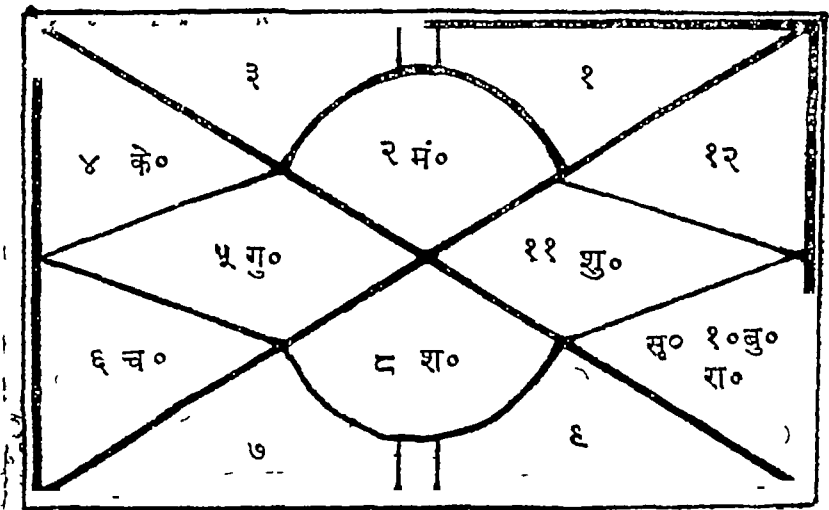
[मं० रो० । च० उत्तरा फा०]

जीव-शरीरग्रहविचार—वृष लग्न से सप्तमभाव वृश्चिक आता है जिसका स्वामी मगल रोहिणीनक्षत्र पर स्थित है और रोहिणी का स्वामी चन्द्र होता है। इस तरह यहाँ चन्द्र 'जीव' ग्रह सप्तमभाव का हुआ। यहाँ चन्द्र उत्तरा फाल्गुनी के २ चरण का है जिसका स्वामी सूर्य है जो तनुभाव का 'शरीर' ग्रह हुआ। इस तरह जन्मकुडली में चन्द्र जीव और सूर्य शरीरग्रह हुआ। यह जीवग्रह चन्द्र बुद्धिस्थानपर बैठा है, अतः बुद्धि द्वारा बड़े-बड़े कार्य कराता है। किन्तु शरीरग्रह सूर्य राहु के साथ होने से अकस्मात् वायुयान द्वारा शरीर नष्ट होने का योग भी बना है। पचमेश बुध वायुयान का द्योतक होता है। चारों केन्द्रोंपर ग्रहों की दृष्टि से युद्धयोग भी है। शनि-मगल और गुरु-शुक्र की परस्पर दृष्टि भी होने से उसने जातक को युद्धकर्ता बनाया है। गुरु ग्रह की महादशा मे इसका मारकेश है।

दिग्बलीयोग—यदि लग्नेश नवम और दशम भाव मे पड़े तो वह लग्न बलवान् होता है, फलतः वह जातक राष्ट्रपति या मन्त्री होता है। यह योग इस कुडली मे पड़ा है, लग्नेश शुक्र दशम भाव मे स्थित है। इसी कारण यह जातक के राष्ट्रपति भी बनता, किन्तु गुरु महादशा में राहु के अन्तर ने सूर्यरूप शरीर को ही नष्ट कर दिया।

मिथुनराशिक तनुभाव-विचार

मिथुन राशि के तनुभाववाले जातक के लिए बुध, शुक्र और सोमवार, रेवती, रोहिणी, हस्त, श्रवण, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाषाढा नक्षत्र तथा कन्या, कर्क, तुला और मीन राशियाँ अच्छी होती हैं। यदि इस जातक का बुधग्रह शुक्रनक्षत्र (भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा) गुरुनक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा) या बुधनक्षत्र (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती) पर हो तो वह शुभप्रद माना गया है। यदि चन्द्रनक्षत्रों (रोहिणी, हस्त, श्रवण) पर बुध हो तो मान-प्रतिष्ठा-वृद्धि और उच्च पदवी प्राप्त होती है। यदि बुध और गुरु के नक्षत्रों पर शुक्र हो तो जातक लोकहितकारी, घर मे उत्सवादि कार्यकर्ता तथा आनन्दप्रद बाते कहता है। यदि गुरु और बुध के नक्षत्रों पर चन्द्र हो तो जातक द्रव्यसग्रहकर्त्ता तथा लाभसम्पन्न होता है। यदि बुध और गुरु के नक्षत्रों पर शनि और राहु हो तो अच्छा-बुरा मिश्रित फल देते हैं।

मिथुन लग्न मे नेपच्यून होने से जातक सुखानन्दभोगी, विद्वान्, समझदार, विपुल ज्ञानशक्ति, भविष्यसूचक, स्वप्नफलदर्शी, विदेशभ्रमण-कारी, संगीतज्ञ, सुन्दर-सुडौल शरीर, प्रेमी और दयालु होता है।

यदि मिथुन लग्न मे हर्षल हो तो जातक ऊँचा कद, दुर्बल शरीर, तेजहीन नेत्र, पीले-सुनहले बालोंवाला, चपल स्वभाव, शास्त्रज्ञ, सच्चरित्र और तीव्र कल्पनाशक्ति होता है।
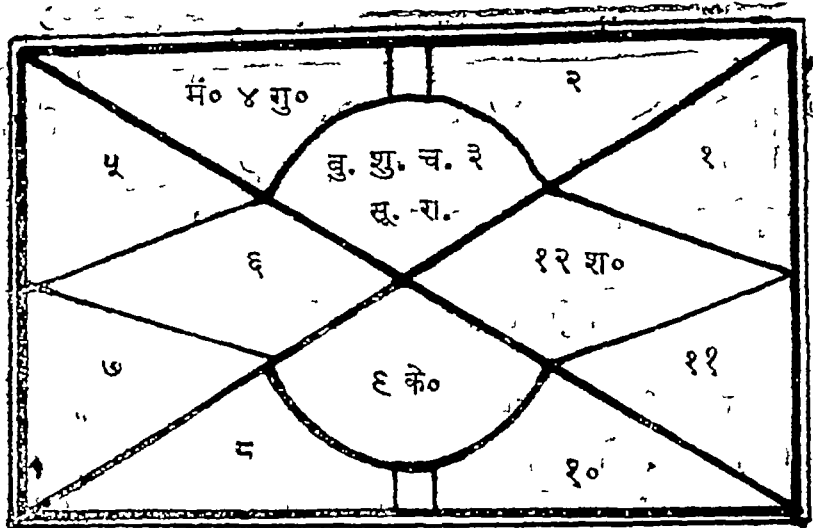
[बु० आर्द्रा । गुरु आश्लेषा । शु० पुन० । श० उ० भा० । मं० पुन० । सू० आर्द्रा । च० मृ० । रा० आर्द्रा)

जीव-शरीरग्रह विचार—यहाँ लग्न से सप्तमेश गुरु आश्लेषा नक्षत्र का है जिसका स्वामी बुध है । अतः जीवग्रह बुध ही हुआ । और बुध कुण्डली मे आर्द्रा का है जिसका स्वामी राहु शरीरग्रह हुआ । राहु स्वगृही नक्षत्र में होने से सब ग्रहों को अपने वश मे रखता है । शनि स्व-स्वामिक नक्षत्र मे होने से राजयोगकारक है । गुरु उच्चाभिगामी होने से राजकोष की वृद्धि करता और दशम पर दृष्टि होने से राजयोगकारक भी हुआ है । किन्तु इसी गुरु की महादशा मे राहु राज्यविलय भी कर देता है । बुधनक्षत्रस्थित गुरु स्वगृही-बलिष्ट होकर शरीरग्रह राहु ने जीवग्रह बुध की शक्ति हर ली है । फिर भी स्वनक्षत्र पर दशमभाव में स्थित शनि की महादशा में जातक पुनः उन्नतिशील और राजयोगभोगी होगा, कारण दशम भाव का स्वामी गुरु उच्च होकर पूर्ण दृष्टि से अपने घर को देख रहा है । जीव-शरीर ग्रह जहाँ होते हैं उसी स्थान की वृद्धि करते हैं । यहाँ

कुंडली में ये दोनों ग्रह (बुध, राहु) लग्न मे ही पडे है, किन्तु नक्षत्र-योग द्वारा इनके फल मे भारी परिवर्तन हो जाता है। जीव-शरीर की मित्रता होने, स्वग्रही होने या उच्च का होने पर जन्मलग्न से सम्बन्ध हो जाता है। ये सब बातें इस कुडली मे हैं जो बहुत अच्छा फल प्रदर्शित करती हैं।

कर्कराशिक तनुभाव-विचार

तनुभाव मे कर्कराशिवाले जातक के लिए गुरुवार शुभप्रद है। विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा और पुनर्वसु नक्षत्र पर स्थित कोई भी ग्रह इसके लिए शुभ फलप्रद है। धन और मीन राशिया इसके लिए श्रेष्ठ होती हैं, इन राशि-वालों से मित्रता रखना लाभप्रद होगा। यदि कर्क लग्नवालों के गुरु, चन्द्र और सूर्य स्वस्वामिक नक्षत्रों मे हों या आपस मे एक दूसरे नक्षत्रों का सम्बन्ध हो तो वे अपनी दशा-अन्तर्दशाओं मे शुभफल दिखलाते हैं। यथा—गुरुनक्षत्र पुनर्वसु, विशाखा या पूर्वाभाद्रपदा पर चन्द्र-सूर्य हों, चन्द्रनक्षत्र रोहिणी, हस्त या श्रवण पर चन्द्र हो या सूर्यनक्षत्र कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी या उत्तराषाढा पर चन्द्र हो तो शुभ है। यदि कर्क लग्न मे गुरु चंद्रनक्षत्रो के अंशो पर हो तो बहुत अच्छा फल देता है। यदि वह शुक्रनक्षत्रो (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा) के अंशों पर हो तो जातक प्रसन्नचित्त तथा उन्नति के कार्य करनेवाला होता है।

कर्क लग्न मे नेपच्यून होने पर जातक नीरोग, अनिश्चित प्रेम, दयालु, कुटुम्ब का पालक, धार्मिक, योगक्रियाओं मे प्रवीण, माता का विशेष प्रेमी, सुन्दर भवननिर्माता, प्रेतादि विद्याओ का ज्ञाता तथा सुन्दर मुखाकृति होता है।

कर्क लग्न पर हर्षल होने से जातक छोटा कद, फीका चेहरा और सुनहले बालोंवाला, किसीके अधीन न रहनेवाला, दुःखभोगी और पौष्टिक पदार्थों का सेवी होता है।
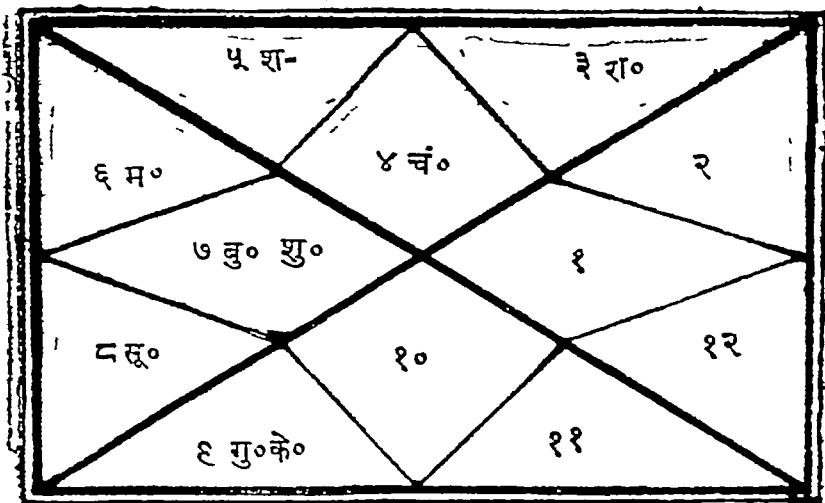
जीवशरीर ग्रहविचार—यहाँ सप्तमेश शनि मघानक्षत्र का है जिसका स्वामी केतु जीवग्रह हुआ। केतु मूल नक्षत्र में स्वगृही है, अतः वही शरीरग्रह भी हुआ। इन जीवशरीर के स्वामी केतु के साथ, जो षष्ठ स्थान में स्थित हैं, गुरु का भी सम्बन्ध है। यह योग शत्रुओं को पूर्ण प्रबल करता है और गुरु के साथ होने से धार्मिक वृत्ति नष्ट करता है। यह चित्त को खेद पहुँचाता और गुरु को घृणा की दृष्टि से देखता है। लग्नेश चन्द्र आश्लेषा नक्षत्र में है जिसका स्वामी बुध है जिसके शुक्र स्वगृही से युक्त है जो भविष्य मे सुखवृद्धिकारक, पराक्रम में वृद्धि-कर्ता और उन्नतिशील हो गया है। मघा का अष्टमेश शनि केतु के प्रभाव मे मारकेश होकर पड़ा है जो राहुमहादशा केतु के अन्तर मे अकस्मात् अपना फल बतलायेगा।

सिंहराशिक तनुभाव-विचार

तनुभाव में सिंहराशि का होना, जिसका स्वामी रवि है, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और प्रबल योग माना गया है। इस राशि के लग्नवाले जातक के लिए गुरुवार; पुनर्वसु, विशाखा और पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र और उनके

स्वामी ग्रह तथा धन, वृषभ, मेष और वृश्चिक राशिया उत्तम फलप्रद होती हैं। सिंहराशिक लग्नवाले जातक का जन्म यदि गुरु और सूर्य नक्षत्र पर हो तो वह और भी उत्तम फलप्रद योग होता है। गुरुनक्षत्र पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा और सूर्यनक्षत्र कृत्तिका, उत्तरा फाल्गुनी और उत्तराषाढा पीछे कहे ही जा चुके हैं। यदि चन्द्र और गुरु सूर्य के नक्षत्रों मे हों तो इस लग्न का जातक बहुत ही उत्तम फल पाता है। यदि बुध गुरु के नक्षत्रों मे हो तो वह उत्तरोत्तर उन्नतिकारक योग है।

सिंहलग्न मे नेपच्यून होने से जातक इतिहासप्रेमी, अधिक लेख लिखनेवाला, चित्रकला में प्रवीण, साहसी, शुद्धहृदय, संगीतज्ञ, कवि तथा सन्मार्गगामी होता है।

यदि सिंहराशिक लग्न मे हर्षल हो तो जातक ऊँचा शरीर, चौड़ी छाती, मजबूत कधे और भूरी मूछोंवाला, शीघ्रगति, उच्च-हृदय, उदार, वीरताप्रेमी तथा अपने बल का गर्व करनेवाला होता है।
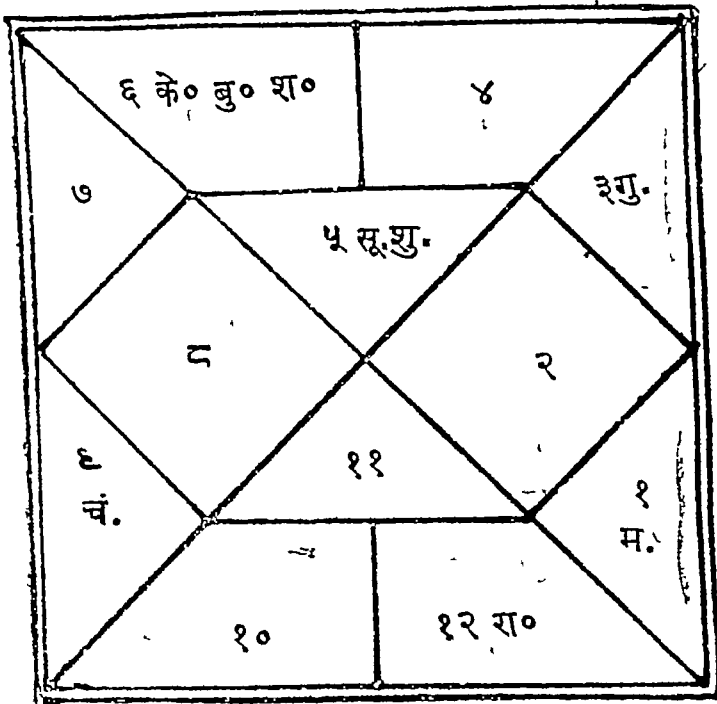
प्रस्तुत जन्मकुण्डली में जन्मलग्न मे लग्नेश सूर्य दिग्बली होकर स्थित है जो जातक को महान् पराक्रमी, न्यायपरायण, उन्नतिशील भाग्योदयवृद्धि-सम्पन्न बनाता है। पूर्वाषाढा में जन्म होने से शुक्र की महादशा प्रभावशाली और विशेष मातृप्रेम की कारक है। शुक्र सूर्य के साथ होने से वैभवशाली राजयोग बनाता है। यहाँ सप्तमेश शनि के चित्रा नक्षत्र का स्वामी मगल 'जीव' और मगल के अश्विनी नक्षत्र का स्वामी केतु 'शरीर' ग्रह हुआ। इस जातक को राहु की महादशा, जो अष्टम भाव में स्थित है, वर्ष ४२ से प्रारम्भ होकर वर्ष ६१ तक रहेगी। राहु शनिनक्षत्र उत्तराभाद्रपदा मे है जो केतु के अन्तर और शनि के प्रत्यन्तर मे कष्टप्रद एव अवनतिकारक योग बनाता है। मिथुन के गुरु की दशा के स्वामी बुध के नक्षत्र मे सूर्य आने पर पुनः उन्नतिकारक योग बनाता है।

कन्याराशिक तनुभाव-विचार

लग्न मे कन्याराशिवाले जातक के लिए शुक्र और गुरुवार; पुनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाषाढा नक्षत्र तथा धन, वृषभ, तुला एव मिथुन राशिया श्रेष्ठ मानी गयी हैं। कन्यालग्न में जातक के जो ग्रह शुक्रनक्षत्र (भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा) और बुधनक्षत्र (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती) में हों वे शुभप्रद अतएव हृदय को प्रसन्नता देनेवाले होते हैं। ऐसा जातक शांति चाहता, तत्त्व की बात समझता और कारीगर होता है। बुध और शुक्र दोनों ग्रह गुरु के नक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा) पर हों तो वे अत्युत्तम फलप्रद होते हैं। यदि शनि गुरु के नक्षत्रों

पर हो तो वह पहले अच्छा फल दिखलाकर बाद मे उसे रोक देता है। यदि मंगल बुध के नक्षत्रों पर हो तो अच्छा या बुरा एक-सा फल देता है।

कन्याराशिक तनुभाव मे नेपच्यून होने से जातक विशेष चिन्ता करनेवाला, शातिइच्छुक तत्वज्ञ और शिल्पकार होता है।

कन्याराशिक तनुभाव मे हर्षल होने पर जातक नाटा कद, कालेचमकीले नेत्र तथा हाथ-पांव की छोटी अंगुलियोवाला, नवीन वस्तुओं का प्रेमी, गुप्त बातें जानने का इच्छुक तथा व्यवहारशून्य होता है।

अब नीचे सोदाहरण कन्याराशि के तनुभाववाले जातक के फल का विचार किया जा रहा है।
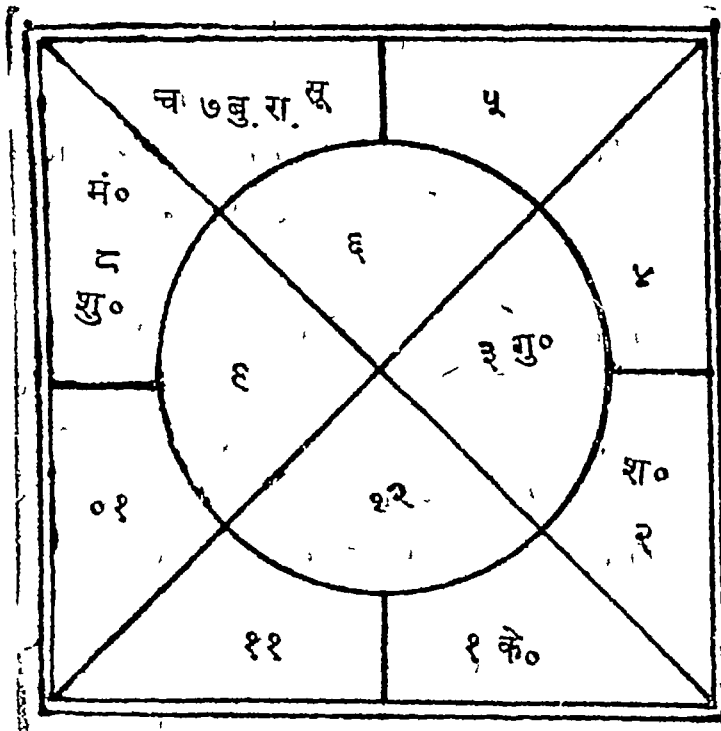
यहा आर्द्रा नक्षत्र का सप्तमेश गुरु दशम भाव मे स्थित है। अतः आर्द्रा का स्वामी राहु 'जीव' हुआ और राहु विशाखा नक्षत्र का है जिसका स्वामी गुरु 'शरीर' ग्रह हुआ। दोनों का एक दूसरे नक्षत्र से सम्बन्ध है।

अतः यह जातक न्यायप्रिय, राजभक्त और सत्यवक्ता होगा। किन्तु स्त्री, कुटुम्ब आदि की पीड़ा-कष्ट से इसका हृदय अशान्त रहेगा । धनस्थान में राहु के साथ सूर्य, चन्द्र और बुध होने से अकस्मात् द्रव्यव्यय और इष्टसम्बन्धियों से विरोध भी कराते हैं।

तुलाराशिक तनुभाव-विचार

जिस जातक के तनुभाव मे तुला राशि हो उसके लिए बुध और सोमवार सब कार्यों मे श्रेष्ठ होते हैं। नक्षत्रों मे रेवती, पुष्य, अनुराधा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी, हस्त और श्रवण तथा राशियों में मकर, कुम, मिथुन और कर्क उत्तम फलप्रद होती हैं।

यदि तुलालग्न मे बुध अपने नक्षत्रों (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती) पर हो तो अच्छा फल दिखाता है। यदि मगल बुधनक्षत्रों पर हो तो वह भी शुभप्रद है। यदि चन्द्र अपने नक्षत्र (रोहिणी, हस्त, श्रवण) पर हो तो वह श्रेष्ठ फल देता है ।

उच्च-तामस योग—चन्द्र और गुरु का उच्च-तामस योग अशुभप्रद होता है। तब उच्च अशस्थ चन्द्र भी अश्विनीनक्षत्र पर अपना बुरा प्रभाव बताता है। कारण अश्विनी के स्वामी केतुरूप तामस ग्रह से उसका योग बन जाता है। ऐसा जातक विविध कष्ट और जायदाद की हानि उठाता है। उसका चित्त स्थिर नहीं रहता। यह सब फल चन्द्र की दशा और अन्तर्दशा में होते हैं।

इसी तरह यदि गुरु त्रिकोण में उच्च का हो और चन्द्र केन्द्र में हो तो भी बुरा फल होता है। कारण उच्च गुरु पुष्यनक्षत्र का है, जिसका स्वामी शनि तामसग्रह है, अतः यहाँ गुरु के उच्च तामस योगी होने से उसकी दशा नेष्ट रहेगी। उसे दीर्घकाल तक बेरोजगारी और अनेक शत्रुओं का सामना करना पड़ेगा है।

तुलाराशिक तनुभाव में नेपच्यून होने पर जातक कवि, शुद्धसंकल्पवान्, सरल स्वभाव और कुछ-कुछ विलासी वस्तुओं का प्रेमी होता है।

तुलाराशिक तनुभाव मे हर्षल होने पर जातक अधिक ऊँचा, हृष्ट-पुष्ट, बलवान्, गोल चेहरेवाला, तेजस्वी, मानी, उद्योगी तथा सदाचारी होता है।
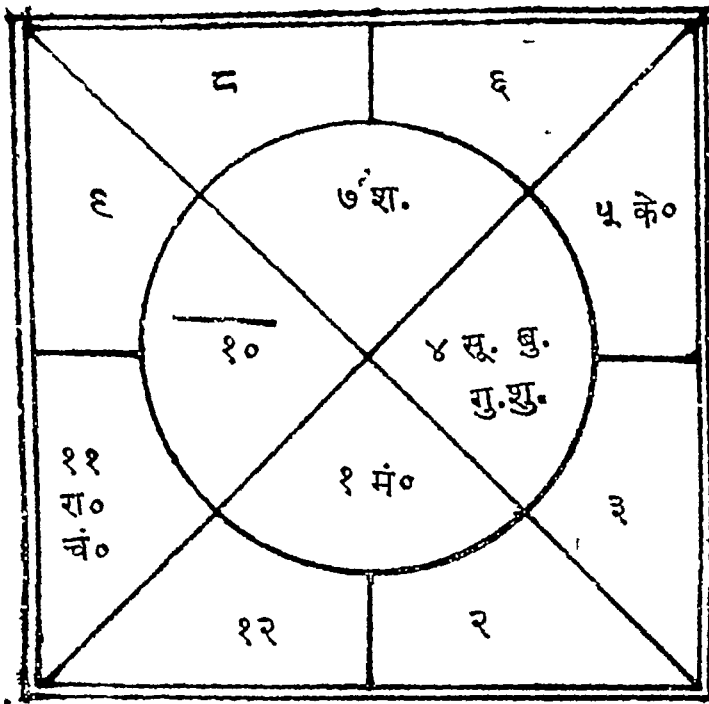
[सू० बु० पुष्य । गु० शु० आश्लेषा । श० वि० । म० भर० । रा० पूर्वाभा० । चं० ध० । के० मं०]

जीव-शरीरज्ञान—यहाँ सप्तमेश मंगल के नक्षत्र भरणी का स्वामी शुक्र 'जीव' और शुक्रनक्षत्र आश्लेषा का स्वामी बुध 'शरीर' ग्रह हुआ। दोनों एक ही स्थान दशम मे पड़े हैं। अतः जातक को उच्चपद, राजसम्मान और प्रतिष्ठा दिलायेगा। गुरु उच्च का होने से यह शिक्षा-विभाग, कृषिविभागीय शिक्षा का अधिकारी होगा। यहाँ गुरु और शुक्र दोनों का युद्धयोग भी है तथा उस स्थान पर शनि की पूर्ण दृष्टि है जो

कभी-कभी उच्चाधिकारियों से वाद-विवाद और विरोध भी कराता है। फिर भी शनि उसे इसमें भी विजय दिलाता है। पंचमस्थ राहु और चन्द्र के पूर्वाभाद्रपदा और धनिष्ठा नक्षत्रों के स्वामी क्रमशः शनि और मंगल हैं। दोनों बलवान्, उच्चस्थ और स्वगृही हैं जो जातक की बुद्धि को तीव्र करते और स्त्री की आयु बढाते हैं, किन्तु ग्रहणयोग द्वारा सन्तान नष्ट करते हैं।

वृश्चिकराशिक तनुभाव-विचार

वृश्चिक लग्न में जन्मे जातक के लिए गुरु, सोम और रविवार; पुनर्वसु, पूर्वाभाद्रपदा, विशाखा, रोहिणी, हस्त, श्रवण, उत्तरा फाल्गुनी और उत्तराषाढा नक्षत्र तथा मीन, कर्क और सिंहराशिया शुभफलप्रद हैं। वृश्चिक लग्नवालों के लिए सूर्यनक्षत्र (कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा), चन्द्रनक्षत्र (रोहिणी, हस्त, श्रवण) और गुरुनक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा) पर यदि कोई ग्रह हों तो वे अत्यधिक लाभकारक होते हैं। इन नक्षत्रों पर सूर्य, चन्द्र और गुरु हों तो शुभप्रद हैं। यदि शुक्र और सूर्य गुरुनक्षत्रों के अंशों के बीच पड़ा हो तो वह इस वृश्चिक लग्नवालों को बहुत उत्तम फल देता है।

वृश्चिक लग्नवाले जातक के तनुभाव में यदि नेपच्यून हो तो वह गुप्त रहने मे प्रसन्न, अत्यन्त उच्चविचार, दूसरों की वस्तुओं पर अधिकार करनेवाला और अभिमानी होता है। वह क्रिया और ज्ञानशक्ति से पूर्ण सम्पन्न, किसीके साथ साझेदारी से लाभ पानेवाला, दत्तक-पुत्रयोगी, भाग्यशाली और प्रतापी होता है।

तनुभाव में वृश्चिकराशिक हर्षल ग्रहवाला जातक छोटा कद, सुदृढ देह, चौड़ी छाती, दृढ कंधे, श्याम वर्ण का चेहरा तथा काले नेत्र और बालोंवाला, अभिमानी कपटी, वावदूक (बोलने मे तेज) तथा दुराचारी होता है।

गुरु-चान्द्रयोग—यदि वृश्चिक लग्न में चन्द्र ज्येष्ठा पर हो और

उसका स्वामी बुध गुरु के साथ हो तो वह गुरु-चान्द्रयोग हो जाता है। गुरु स्वगृही होकर द्वितीय भाव मे कारक है और उसका प्रभाव चन्द्र पर पड़ता है। इस योग द्वारा चन्द्र अशुभ होता हुआ भी शुभप्रद अर्थात् द्रव्य और भाग्यवृद्धिकारक बन जाता है।
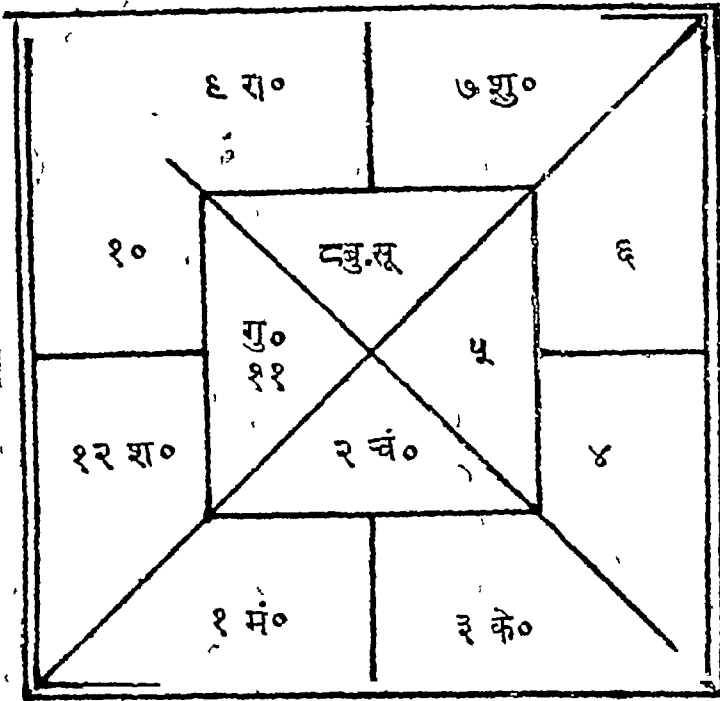
इस कुडली मे सप्तमेश शुक्र के चित्रा नक्षत्र का स्वामी मंगल 'जीव' और मंगल के भरणी नक्षत्र का स्वामी शुक्र 'शरीर' ग्रह हुआ। दोनों की आपस मे दृष्टि और नक्षत्रसम्बन्ध है, जो दीर्घायु तथा उन्नतिकारक योग है। ये द्वादश और षष्ठभाव मे होने से राजसम्बन्धी कार्यों में कष्ट किन्तु अन्त में सुख, पदवी और सम्मानकारक योग बनाता है। सूर्य लग्न में होने से पराक्रमी योग है और वह बुध से दिग्बली भी हो गया है। उच्चस्थ स्वनक्षत्री चन्द्र स्त्री और जायदाद का सुख तथा मानप्रतिष्ठा दिलाता है। अष्टम केतु मोक्षदाता और अकस्मात् घटनाकारक है।

धनराशिक तनुभाव-विचार

धनलग्न के जातक के लिए गुरु, रवि और बुधवार ; पुनर्वसु, पूर्वाभाद्रपदा विशाखा, रेवती, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराषाढा नक्षत्र तथा मीन, सिंह, कन्या और मेष राशिया उत्तमफलप्रद हैं। यदि धनलग्न के जातक के सूर्य और गुरु अपने ही नक्षत्रों (क्रमशः कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराषाढा तथा पुनर्वसु, विशाखा और पूर्वाभाद्रपदा) ही पर हों तो वे उत्तम कार्य कराकर उन्नतियोग बनाते हैं। यदि उक्त नक्षत्रों पर बुध भी हो तो इस लग्न मे उत्तम फल देगा। यदि बुध के नक्षत्रों (आश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती) पर सूर्य हो तो वह राजसम्मान और द्रव्यलाभ कराता है। यदि सूर्य और बुध के नक्षत्रों पर मगलग्रह हो तो वह शुभप्रद है।

धनराशिक तनुभाव मे नेपच्यून होने से जातक अभिमानी, दूसरों को शिक्षा देनेवाला, दयालु, धनसग्रही, शेयर-मील आदि का व्यापारकर्ता ठिंगना कद, श्यामवर्ण और प्रेम में अपमानित होता है।
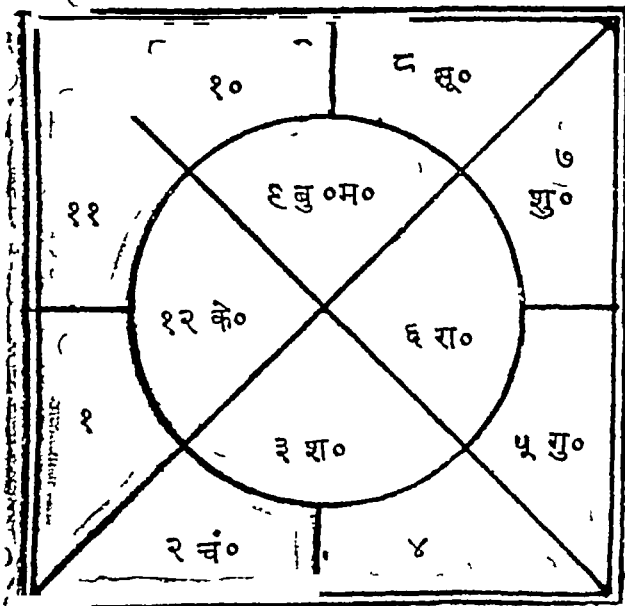
धनुराशिक तनुभाव मे हर्षल होने से जातक ऊंचा शरीर, पुष्ट देह, गौर वर्ण, सुन्दर चेहरा, चौड़े कपाल और फीके नेत्रोंवाला, शुद्धहृदय व्यायाम के खेलों का ज्ञाता और आराम भोगनेवाला होता है।

जीव शरीरग्रह विचार—यहां सप्तमेश बुध के मूलनक्षत्र का स्वामी केतु और केतु के उत्तराभाद्रपदा का स्वामी शनि क्रमशः जीव एवं शरीरग्रह हुए। फलतः जातक को प्रथम अवस्था मे कई कष्टो का सामना करना पड़ता है। यहा गुरु दिग्बली होने के साथ लग्नस्थ दशमेश बुध भी दिग्बली हो गया है। यह योग जीवन मे सब कार्य सफल कराता है। इसी से जातक के राष्ट्रपति होने का योग भी है। दशम राहु भी उच्च पद पर प्रतिष्ठित होने का योग बनाता है। इस योग का फल वृद्धावस्था मे ही मिलेगा।

मकरराशिक तनुभाव-विचार

मकरलग्न के जातक के लिए शुक्र और बुधवार; रेवती, पुष्य, अनुराधा और उत्तरा भाद्रपदा नक्षत्र तथा कन्या, वृषभ और तुला राशियां श्रेष्ठ हैं।

मकर लग्न में जन्म लेनेवालों के ग्रह निम्नलिखित नक्षत्रों पर हों तो उत्तम फलप्रद होते हैं—शुक्र बुध के नक्षत्रों मे हो और बुध शुक्र के नक्षत्रों मे तो शुभफलप्रद होता है। बुधनक्षत्र आश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती तथा शुक्रनक्षत्र भरणी, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाषाढा पीछे कहे गये हैं। यदि शनि केतु के नक्षत्र मे हो तो उत्तम फल देता है। केतु के नक्षत्र अश्विनी, मघा और मूल हैं। मगल और शनि बुधके नक्षत्रों (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती) मे अच्छा फल देते हैं। उक्त नक्षत्रों पर ग्रहों के होने से वे बलवान् और शुभप्रद हो जाते हैं।

मकरराशिक तनुभाव मे नेपच्यून होने से जातक दुष्टप्रकृति, उधार लेकर न देनेवाला, बहुत स्वार्थी, अनुदारचित्त, कपटी, अविचारपूर्वक कार्य करनेवाला और मलीन हृदय होता है।

मकरराशिक तनुभाव मे हर्षल होने से जातक मध्यम शरीर, लम्बी

गर्दन, चौड़ा कपाल, कमजोर नेत्र और काले बालोंवाला, अभिमानी और सतोत्री होता है।
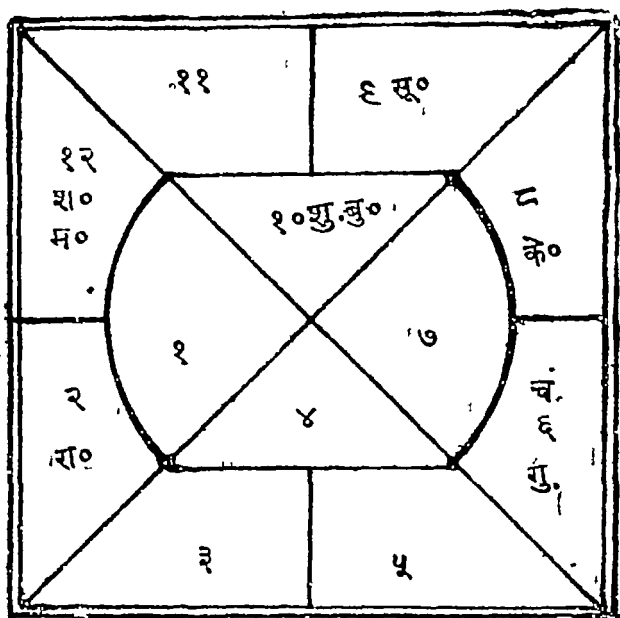
जीव-शरीरग्रह विचार—यहां सप्तमेश चन्द्र चित्रानक्षत्र का है जिसका स्वामी मंगल शनि के साथ तृतीय में है। अतः मंगल 'जीव' ग्रह और मंगल के रेवती नक्षत्र का स्वामी बुध 'शरीर' ग्रह हुआ। बुध दिग्बली होने से भाग्यशाली उन्नतिकारक योग बनाता और व्यापार में उन्नति कराता है।

कुंभराशिक तनुभाव-विचार

कुंभलग्न के जातक के लिए शुक्र और बुधवार; रेवती नक्षत्र तथा मिथुन, वृषभ और तुला राशिया उत्तम मानी गयी हैं। कुंभ लग्नवालों के लिए बुध का शुक्र के नक्षत्रों (भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा) में होना शुभप्रद है। शुक्र बुध के नक्षत्रों (आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती) मे शनि

बुध या केतु के नक्षत्रों मे हो तो उन्नतिकारक फल देते हैं। सूर्य बुध के नक्षत्रों मे शुभप्रद है।

कुम्भराशिक तनुभाव मे नेपच्यून होने से जातक उदार स्वभाव, दयालु, ईश्वरीय संकेतज्ञ, मित्रप्रेमी, मोटे शरीर, लम्बे कद तथा सुन्दर चेहरेवाला, बुद्धिमान् और शांतिप्रिय होता है।

कुम्भराशिक तनुभाव मे हर्षल होने से जातक मध्यम शरीर, सुन्दर एव चौड़े चेहरे तथा भूरे बालोवाला, शास्त्रज्ञ, गुप्तविद्याज्ञाता और अच्छे स्वभाव का होता है।

१२ रा०	ल० ११ सू०बु०	१० शु०	९ मं०
१			८
२ गु०			७ श०
३ च०	४	५	६ के०

यहाँ सप्तमेश सूर्य के शततारका नक्षत्र का स्वामी राहु 'जीव' और राहु के रेवती नक्षत्र का स्वामी बुध 'शरीर' ग्रह है। बुध लग्न मे दिग्बली ग्रह है। जीव राहु धनभाव मे होने से धन की अकस्मात् क्षति करता है

जिससे जीव को काफी कष्ट पहुँचता और अशान्ति पैदा होती है । बुध ही शरीर को शान्ति और आशा देता तथा जायदाद और सवारी का सुख भी प्राप्त कराता है । चन्द्र पुत्रस्थान पर पुनर्वसु नक्षत्र का है जिसका स्वामी गुरु है जो प्रौढावस्था अर्थात् ५० वर्ष बाद पुत्रसुख देता है । किन्तु यही गुरु धन नष्ट करता है ।

मीनराशिक तनुभाव-विचार

मीन लग्न के जातक के लिए सोम और गुरुवार ; रोहिणी, हस्त, श्रवण, पुनर्वसु, विशाखा और पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र तथा धन और कर्क-राशिया या उनपर रहनेवाले ग्रह उत्तम फल देते हैं ।

यदि चन्द्र और गुरु अपने ही नक्षत्रों मे हों तो उत्तम फल देते हैं । यदि चन्द्रनक्षत्र (रोहिणी, हस्त, श्रवण) पर गुरु हो या गुरु-नक्षत्र (पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपदा) पर चन्द्र हो तो वे तथा अपने अथवा गुरु के नक्षत्रों पर स्थित-बुध भी उत्तम फल देता है ।

मीनराशिक तनुभाव मे नेपच्यून होने पर जातक चौपायों (गाय, बैल, घोड़ा आदि) का पालक, दयालु, सद्विचार, अकस्मात् द्रव्यहानि-भोगी, दूसरों का सहायक, दान से जीवननिर्वाहक और भाग्यहीन होता है।

मीनराशिक तनुभाव मे हर्षल होने से जातक नाटा कद, बेडौल शरीर और निस्तेज चेहरेवाला, रोगी, टेढ़ा तिरछा चलनेवाला, कपटी, आलसी, सबको अप्रिय और उदास होता है ।

उच्चस्थ शुक्र विचार—यदि केन्द्रगत शुक्र उच्च हो और लग्न में वह उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र का हो, जिसका स्वामी ११, १२ घर का अधि-पति शनि है, तो वह शुक्र अपनी दशा में जातक को कष्ट, खेद, चिन्ता, स्त्री की मृत्यु, नौकरी से अलग होने आदि की घटनाए कराता है । अतः उच्च के शुक्र का फल बुरा ही होगा । यदि शुक्र अष्टमभाव का स्वामी, स्वगृही और स्वाती नक्षत्र का हो तो राहु नक्षत्रस्वामी होने से तामसमिश्र

योग हो जाता है। यहाँ शुक्र का फल अच्छा होगा, क्योंकि योगकारक नक्षत्र का फल श्रेष्ठ है। शुक्र अपने मित्रग्रह से सम्बद्ध होने से अच्छा-बुरा मिश्रित फल देगा।

मीन लग्न पर गुरु की पूर्ण दृष्टि हो, जो हस्तनक्षत्र का हो और जिसके स्वामी चन्द्र के साथ केतु भी पड़ा हो, तो वह आस-पास का वातावरण भी शत्रुवत् अशुभप्रद बनाता है। शनि मगल दृष्टि से स्वास्थ्य भी बिगाड़ देता है। गुरु अपनी दशा-अन्तर्दशा मे अच्छा फल देता है।

यदि शनि स्वगृही होकर सूर्य के साथ हो तो वह सूर्य का प्रभाव हर लेता है। अतः बुरा फल अधिक और अच्छा कम देता है। यदि स्वगृही सूर्य के साथ शनि हो तो अच्छा फल विशेष और बुरा कम होगा। यदि उच्च का सूर्य अकेला हो और उसपर गुरु की पूर्ण दृष्टि हो तो जातक बराबर उन्नति करता जायगा।

चन्द्र-सूर्य योग—यदि सूर्य नीच राशि का हो और उसपर किसी ग्रह की दृष्टि भी न हो तो फल अच्छा होगा। यदि सूर्य पर चन्द्र की लग्न से पूर्ण दृष्टि हो तो दोनों ग्रह मित्र ही होने से अच्छा फल देंगे।

मीन राशिक तनुभाव मे नेपच्यून होने से जातक यह आध्यात्मिक शक्ति का विकास और तत्त्वज्ञान का अनुभव करता है। उसमे संकल्प-सिद्धि, अंतर्ज्ञान तथा विचारों की स्थिरता पायी जाती है। यदि ग्रह निर्बल हो तो मन को निर्बल बनाते, अव्यवस्थित कार्य कराते और आपत्तियो से डराते हैं। यह जातक सगीत और अन्य कलाओ मे कुशल होता है।
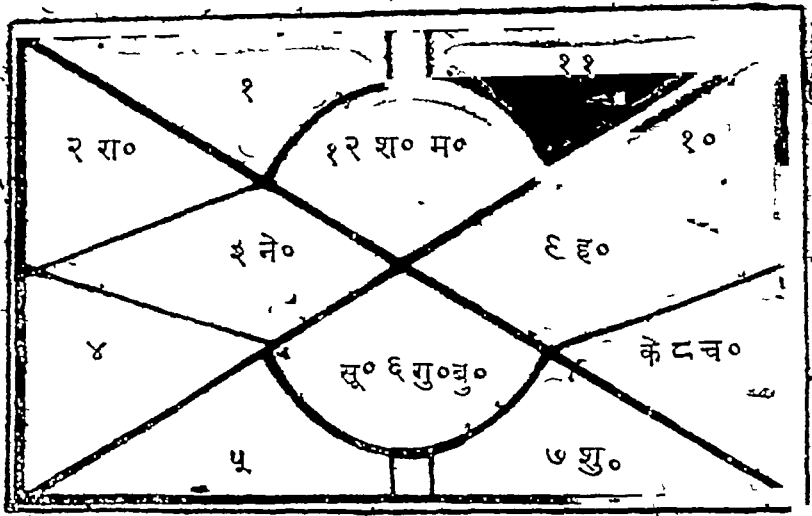
इस कुडली मे सप्तमेश बुध के नक्षत्र चित्रा का स्वामी मगल 'जीव' और मगल के उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र का स्वामी शनि 'शरीर' ग्रह है। मगल शनि का आपस में युद्ध है, अतः जीव, शरीर को आराम नहीं पहुचने देता। लग्न में दोनों ग्रह एक स्थान पर बैठे हैं, इसलिए तनु भाव पर पूर्ण प्रभाव डालते हैं। सूर्य, गुरु, बुध भी अस्तराशि पर स्थित होने से इनका कोई प्रभाव नहीं होता। सूर्य अपने ही नक्षत्र पर है जो केन्द्रमत वलवान् होने से राजयोगकारक है। भाग्येश मगल के ही जीवग्रह होने के कारण लग्न के सम्बन्धयोग से जातक वैदिक प्रगतिकर्ता, धार्मिक और तपस्वी होता है।

तनुभाव के योगों का विचार

यहातक तनुभाव के १२ राशिपरक फलों का सोदाहरण विवेचन किया जाचुका। अब इस भाव के प्रमुख योगों का विचार किया जा रहा है। उपर्युक्त द्वादश भावों में चार केन्द्र (प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम) और कोण (पञ्चम और नवम) ये ६ भाव शुभ, द्वितीय (धन) मध्यम (मारकेश) तथा तृतीय, षष्ठ, अष्टम, एकादश और द्वादश भाव अशुभ

कहे गये हैं। चार केन्द्रों में भी दो ही चतुर्थ और दशम केन्द्र योगकारक कहे गये हैं, शेष दो केन्द्र फलभोगी हैं।

अशुभ भावों में यदि शुभ भावों के अधिपति आ जाय तो वे अपना फल बुरा ही बतायेंगे। और यदि अशुभ भावो के अधिपति शुभ भावों में आ जाय तो वे शुभप्रद हो जाते हैं।

अब नीचे प्रमुख २१ योगो का, जो तनुभाव से सम्बद्ध हैं, विचार किया जा रहा है।

राष्ट्रपति योग—त्रिकोण लक्ष्मी का और केन्द्र विष्णु का स्थान है। दोनों के संयोग अर्थात् केन्द्रेश-कोणेश के योग से राष्ट्रपति या चक्रवर्ती सम्राट् योग होता है। जैसे किसीका धनलग्न का जन्म हो तो उस लग्न से केन्द्रेश गुरु, बुध होते हैं और त्रिकोणेश मगल, सूर्य। यदि नवम स्थान मे सूर्य, गुरु और दशम मे मगल, बुध ग्रह हों तो राष्ट्रपति योग होगा।

नवेश योग—लग्नेश विशेष बलवान् होकर केन्द्र मे स्थित हो, उसे शुभग्रह देखते हों और पापग्रह की दृष्टि न हो तो नवेश योग बनता है। इस योगवाला मनुष्य सब दोषों का संहारकर भाग्योदय पाता और दीर्घायुषी भी होता है।

दीर्घायु योग—यदि लग्नेश त्रिकोण के स्वामी से युक्त हो तो वह दीर्घायु योग है जो सौभाग्य और विशेष कीर्ति देता है तथा साम्राज्य एव सुधर्म का लाभ कराता हुआ जातक को दीर्घायु बनाता है।

(४) अल्पायु योग—लग्नेश अष्टमेश से युक्त हो तो अल्पायु योग होता है जो द्रव्य भी हरण करता है। यदि उसे शुभग्रह देखते हों तो जातक मध्यमायु होगा। पापग्रह की दृष्टि हो तो अधिक आयु नहीं पायेगा। यदि चन्द्र पापग्रह से युक्त होकर ५, ७, ६, १२, ८ भावोंमे से किसी पर स्थित हो या उसे बलवान् शुक्र, गुरु और बुध न देखते हों तो भी जातक अल्पायु होता है।

(५) मृत्यु योग—लग्नेश या चन्द्र से युक्त राहु लग्न में हो तो

मृत्युयोग होता है जिससे जातक भूत-प्रेतबाधा से कष्ट पाता है। यदि कर्मेश, अष्टम और एकादश भाव से युक्त होकर उनके स्वामी से दृष्ट हो तो जातक की उस ग्रह की दशा में निश्चय ही मृत्यु होती है।

(६) **गृह-मन्दिरादि निर्माण योग**—धनेश नवमेश से युक्त हो तो गृहमन्दिर-निर्माण योग बनता है जिससे जातक महाधनी, भूपति, भाग्यशाली, सब लोगों का पालक, दयालु, विद्याप्रेमी और गृह-मन्दिर आदि बनवाने का पूर्ण इच्छुक होता है।

(७) **लक्ष्मीप्राप्ति योग**—यदि त्रिकोण पचम और नवम के स्वामी से युक्त हो या परस्पर दोनों की दृष्टि हो तो शीघ्र लक्ष्मीप्राप्ति योग बनता है। यदि वह केन्द्र के स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तो विशेष द्रव्य की प्राप्ति होगी। दुष्टभाव के स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तो मिश्रफल देगा।

(८) **भाग्यवान योग**—यदि चतुर्थ स्थान का स्वामी त्रिकोण दोनों के स्वामियो से युक्त या दृष्ट हो तो वह भाग्यवान होता है। इससे जातक राजलक्ष्मीभोक्ता, विपुल विद्या-वाहनसम्पन्न मातृसुखी, बन्धुपालक, गृहसुखी, जितेन्द्रिय एव भाग्यवान् होता है।

(९) **सार्वभौम योग**—यदि दोनो त्रिकोणों के स्वामी से किसी ग्रह और भाव का सयोग हो तो वह सार्वभौम योग होता है। इससे गरीब अमीर हो जाता और निम्न पुरुष भी उन्नतिकर उच्च पदवी प्राप्त करता है। जिस भाव मे यह योग होगा उसी भाव की वृद्धिकर उस ग्रह की दशा में लक्ष्मीप्राप्ति और उच्चपद ग्रहण करायेगा, यह अनुभूत फल है।

(१०) **शत्रुवृद्धि योग**—अष्टमेश जिस भाव मे हो और शत्रुभाव को देखता हो तो उस भाव के स्वामी की दशा में शत्रुवृद्धि योग होगा। यदि अष्टमेश लाभेश से युक्त हो तो उस भाव के स्वामी की दशा मे शत्रु द्वारा मृत्यु होती है। धनेश नीच राशि का हो और उसे अष्टमेश, लाभेश देखते हों तो उसकी दशा मे कष्ट द्वारा मृत्यु होगी। यहा यह ज्ञातव्य है कि संयोग दो प्रकार के होते हैं—एक तो साक्षात् योग और दूसरा दृष्टियोग।

इनमें पापग्रहो का दृष्टियोग अपने स्वभावानुसारी फल मे विशेषता लाता है, और शुभग्रहों का सयोग शुभ फल मे श्रेष्ठता लाता है।

(११) भिक्षुक योग—यदि स्थिर राशि का लग्न हो और समस्त पापग्रह त्रिकोण और केन्द्र मे हो, शुभग्रह सब बाहर हों तो वह भिक्षुक योग होता है जिससे जातक भिक्षा मागकर निर्वाह करेगा और परपोषित होगा। चर राशि लग्न मे जातक का रात्रि का जन्म हो, शुभग्रह निर्बल होकर केन्द्र-त्रिकोण मे हो तथा पापग्रह एक भी केन्द्र मे न हो तो वह प्रतिदिन भिक्षा मांगकर ही अपनी गुजर करता है।

(१२) चाप योग—यदि लग्नेश उच्च हो और चतुर्थेश दशमस्थ हो तथा दशमेश चतुर्थस्थ हो तो चापयोग होता है। इस योगवाला जातक १८ वर्ष की अवस्था के बाद ही किसी उच्च पद का अधिकारी या कोषाध्यक्ष होता है। यदि शुक्र कुभराशिगत हो, मगल मेषराशिगत हो और बुध स्वगृही हो तो एक दूसरा भी चाप योग बनता है जो उच्च पद दिलाता है।

(१३) चक्र योग—यदि लग्नेश नवम भाव मे हो, दशमेश लग्न मे हो और राहु दशमस्थ हो तो चक्रयोग बनता है। इस योगवाला जातक २० वर्ष की अवस्था के बाद ग्राममडली का अधिपति होता है। यह सेनापति और जनता द्वारा माननीय भी होता है।

(१४) चतुर्मुख योग—यदि लग्नेश और दशमेश केन्द्रगत हो, नवमेश से गुरु केन्द्र मे हो और एकादशेश से शुक्र केन्द्रवर्ती हो तो वह चतुर्मुख योग बनता है जिससे जातक ब्राह्मण और विद्वानों से पूजित, विद्याओं का ज्ञाता, विजयी, भोजनसुखसम्पन्न तथा भूमिदाता होता है।

(१५) चन्द्र योग—यदि लग्न मे कोई उच्चग्रह हो, उसपर मगल की दृष्टि हो और नवमेश तृतीयस्थ हो तो वह चन्द्रयोग होता है। इस योगवाला मन्त्री, सेनाधिपति, अश्वादि वाहनो का स्वामी, साहसी और बलवान होता है। यदि मीनलग्न से उच्च का शुक्र लग्न मे बैठा हो तो नवमेश मगल योग होगा। इस योग की पूर्ति के लिए मंगल मीन से तृतीय स्थान और वृष मे रहना आवश्यक है।

(१६) देवेन्द्र योग—यदि लग्न स्थिर राशि (८,२,५,११) का हो तथा लग्नेश एकादशस्थ और एकादशेश लग्नस्थ हो या द्वितीयेश दशमस्थ और दशमेश द्वितीयस्थ हो तो देवेन्द्रयोग होता है। इस योगवाला सुन्दर स्त्रियों का प्रिय, अनेक विद्या-कलाओं का जाननेवाला, सेनापति, साहसी और माननीय होता है।

(१७) त्रिलोचन योग—यदि सूर्य, चन्द्र, मंगल एक दूसरे से त्रिकोणस्थ हों और तीनों ग्रहो के साथ शुभग्रह हों तो वह त्रिलोचन योग होता है। ऐसे योगवाला मनुष्य धनाढय, बुद्धिमान्, शत्रुओं पर विजय पानेवाला और दीर्घायु होता है।

(१८) नागेन्द्र योग—नवमेश तृतीयस्थ हो और उस पर गुरु की दृष्टि हो तो नागेन्द्र योग होता है। इस योगवाला मनुष्य सुन्दर और सुडौल होता है। छठे वर्ष से ही इसके सुख के वृद्धि होती रहती है।

(१६) पर्वतयोग—यह योग दो प्रकार से होता है—(१) यदि शुभग्रह लग्न से केन्द्रगत हों, षष्ठ, और अष्टम भाव में भी शुभग्रह हों अथवा कोई ग्रह न हो। (२) लग्नेश और द्वादशेश एक दूसरे से केन्द्र में हो और मित्र ग्रहों से दृष्ट हो। इस योग से जातक भाग्यशाली, विद्याप्रेमी, यशस्वी दाता, ग्रामों का अधिपति, कामी और परस्त्रीगामी होता है।

(२०) बुधयोग—यदि लग्न मे गुरु हो, गुरु से केन्द्र में चन्द्रमा, चन्द्र से द्वितीय भाव मे राहु और तृतीय भाव में सूर्य अथवा मंगल हो तो वह बुधयोग होता है जिससे जातक धनाढ्य, बलवान्, कीर्तिमान्, शास्त्रज्ञ, क्रय-विक्रय मे चतुर और बुद्धिमान होता है।

(२१) पद्मयोग—यदि लग्न से नवमेश और चद्र से नवमेश शुक्र के साथ नवम स्थान मे बैठा हो तो पद्मयोग हाता है। ऐसे योगवाला जातक सदा आनन्दयुक्त, सुखी, शुभकार्यनिरत और १५ और २० वर्ष की अवस्था के बाद भाग्योदयभोगी होता है।

तृतीय प्रकरण समाप्त

चतुर्थ प्रकरण

[धनभाव और उसके योगों का विचार]

जन्मकुण्डली में द्वितीय स्थान धनभाव कहा जाता है। इससे निम्न-लिखित बातों का विचार करना चाहिये—धन, कुटुम्ब, दत, दक्षिण नेत्र, वाणी, व्याख्यातृत्वशक्ति और चेहरा। यदि धनभाव का स्वामी जिस नक्षत्र पर हो और उस नक्षत्र का स्वामी तृतीय, षष्ठ, अष्टम, एकादश एवं द्वादश भावों में पड़ा हो तो उस जातक के धन, कुटुम्ब, नेत्र और दन्त अच्छी स्थिति में न रहेंगे। इस फलादेश में भी उस नक्षत्र के सात्विक, राजस, तामस गुणों के भेद से फलभेद होने से वह भी विचार्य है। इस तरह यदि धनभाव का स्वामी सात्विक नक्षत्र पर रहकर केन्द्र या त्रिकोण में पड़ा हो तो उपर्युक्त सब विषयों के फल बदलकर अच्छे हो जायँगे। यदि धनभाव का स्वामी स्थिर (सिंह, वृश्चिक, कुम्भ और वृष) राशियों पर हो और उस स्थान का जीव और शरीरग्रह केन्द्र या त्रिकोणगत हो तो उस जातक की आर्थिक, कौटुम्बिक स्थिति, व्याख्या-तृत्वशक्ति और दन्त, नेत्र तथा चेहरा जन्म से ही अच्छा रहेगा। गुरु धनकारक श्रेष्ठ फलप्रद कहा गया है।

मनुष्य के धन तथा कुटुम्ब की हानि ग्रहनक्षत्रों के अशुभ योगों पर निर्भर है। यदि धनभाव पर किसी ग्रह की दृष्टि न हो और उसके स्वामी से उस स्थान का षष्ठ-अष्टम योग हो तथा नक्षत्रस्वामी भी धनभाव को न देखता हो तो निश्चय ही उस जातक के धन एवं कुटुम्ब का ह्रास होगा। गुरु और बुध लग्न तथा केन्द्रस्थानों में बलवान् होते हैं। यदि इन ग्रहों के नक्षत्रों के स्वामियों का धनभाव से सम्बन्ध न हो और न धनाधि-पति के साथ ही सम्बन्ध हो तो वह जातक धनसग्रह न कर सकेगा। ऐसे

ग्रह एव नक्षत्रों के अशुभ योगों से मानव न तो कुछ द्रव्य संग्रह कर सकता है और न अमीर ही बन सकता है। ऐसे जातकों की जन्मकुण्डली मे दशम भाव से द्रव्यार्जन का योग देखना चाहिये।

अब द्वितीय धनभावस्थित सभी ग्रहों का पृथक्-पृथक् फल कहते है।

धनभावस्थ ग्रहों के फल

सूर्य—तत्तद् भावस्थ ग्रहों के फल उनके बलाबल पर निर्भर करते हैं। इस द्वितीय भाव मे स्थित ग्रहों के फल भी उसीके अनुसार होंगे। यदि द्वितीय भाव मे सूर्य बलवान् हो तो वह जातक अत्यधिक भाग्यवान् होकर उसकी आर्थिक स्थिति सन्तोषजनक रहेगी। उसे चौपायों का सुख उत्तम मिलेगा। दात सुदृढ रहेंगे और नेत्रज्योति सुतीक्ष्ण होगी। उसे कुटुम्बसुख भी उत्तम प्राप्त होगा।

किन्तु यदि वही सूर्य बलहीन या निर्बल हो तो फल विपरीत हो जायगा। तब वह अभागा और दरिद्र रहेगा। वाहन एव कुटुम्बसुख से वचित रहेगा। दन्त एव नेत्रो मे रोग होगा। वह बुद्धि का कुन्द रहेगा। वह स्वजनों की मित्रता से रहित और परावलम्बी रहेगा। उसकी वाणी तीक्ष्ण, ऊँची और कठोर रहेगी जिससे दरिद्रता की प्राप्ति स्पष्ट है।

चन्द्र—यदि धनभाव में बलवान् चन्द्र हो तो वह जातक पुत्र एव द्रव्य की दृष्टि से पूर्ण सुखी और विनीत रहेगा। उसके चेहरे पर स्त्री सा प्रभाव या आकर्षण होता है। वह बड़ी बड़ी आँखोंवाला और सुन्दर होता है जिसे देख देवांगनाएँ भी वश हो जाती हैं। उसकी कुटुम्ब मे प्रीति और कुटुम्ब-वृद्धि होती है।

किन्तु यदि धनभावस्थ चन्द्र निर्बल या क्षीण हो तो जातक स्खलित-वाणी, धनहीन या अल्पधन और मन्दबुद्धि होता है। यदि न्यूनाधिक हो तो उसी प्रकार फल में भी तारतम्य समझना चाहिये।

मङ्गल—यदि धनभाव में मगल हो तो उस जातक को नेत्ररोग

और धन की हानि होती है। वह ऋण धन का कांक्षी, जुआड़ी और खर्चीला होता है। वह कृषिकार्य मे समर्थ और कृशशरीर होता है।

यदि यही मंगल यहाँ शुभग्रह के साथ हो या लग्न मे हो तो वह राजा होता है।

बुध—यदि धनभाव मे बुध हो तो वह जातक धनसंग्रहकर्ता, सुशील गुरु का प्रीतिपात्र, कुशलता के साथ सभी तरह का सुख पानेवाला, सुन्दर-कान्ति, दूसरो की साक्षी देनेवाला और व्याख्यान मे चतुर होता है। वह अत्यन्त बुद्धिमान् होता है

गुरु—यदि धनभाव मे गुरु हो तो वह जातक सुरूप, विद्या, गुण एव कीर्ति से सम्पन्न और सत्यभाषी होता है। उसका किसीसे वैर नहीं रहता। यह त्यागी और धनवान् होता है। उसमे कवित्व एव कर्तृत्व-शक्ति होती है।

शुक्र—यदि धनभाव मे शुक्र हो तो वह जातक कृशशरीर, कृपण, दुरात्मा, धनहीन और सदा कामसन्तप्त रहता है। मुख से वह मीठी बाते करेगा और सुन्दर वस्त्राभूषणों का कांक्षी होगा। वह सज्जनों का अनिष्टकारी और पर्याप्त दुष्ट चेष्टाओं से युक्त होगा। वह अधिक बोलने-वाला और शुभग्रहों से युक्त होने पर धनवान् होगा। उसे आँखों मे रोग का होना भी संभाव्य है।

शनि—यदि धनभाव में अशुभ शनि हो तो वह जातक कष्टों से पीड़ित, स्वजनो से परित्यक्त और धनहीन होता है। यदि वही शुभ हो तो वह जातक देशान्तर-गमन करने पर वाहन, धन एवं राजसम्मान का सुख पाता है। तब इसका फल शुभ हो जाता है।

राहु—यदि धनभाव मे राहु हो तो वह जातक धनहीन, अनेक दुःखों से लिप्त और चोर होता है। उसकी आँखें छोटी होती या आँखों से कम दीखता है। उसके दांत भी जल्दी गिरते हैं। वह मत्स्यमासविक्रेता और नीच के घर रहनेवाला होता है।

केतु—यदि धनभाव मे केतु हो तो उस जातक की नेत्रज्योति कम होगी। दात छोटे होकर शीघ्र गिर पड़ेंगे। उसमे बोलने की शक्ति कम होगी। वह सदा व्यग्र, मुखरोगी, कुटुम्ब से विरोध रखनेवाला और जन-हीन होता है।

हर्षल—(प्रजापति) यदि धनभाव मे हर्षल हो तो उस जातक की आकस्मिक मृत्यु होगी। यदि वह पापग्रहों के साथ हो तो हैजा, प्लेग आदि सक्रामक रोगों से वह कुटुम्बहीन हो जाता है। तब यह ग्रह विशेषतः स्त्री के लिए मारक हो जाता है। यदि हर्षल शनिग्रह के साथ हो या शनि की दृष्टि उसपर हो तो उसकी अकस्मात् धनादिहानि होकर वह सदा दरिद्र रहेगा।

यदि यही हर्षल बलवान् होकर शुभग्रहों के साथ धनभाव हो तो उस जातक को अद्भुत वस्तुओं का लाभ होता है। वह ज्योतिषशास्त्र का ज्ञाता और विचित्र कल्पक या ग्रन्थकार होता है। वह प्रत्येक कार्य समझ-बूझकर करता है।

नेपच्यून (वरुण)—यदि धनभाव मे नेपच्यून हो तो वह जातक अकस्मात् धन पाकर धनवान् बनेगा। उसे समुद्री जहाज, नौका, अस्पताल, अनाथालय आदि के काम से लाभ होगा।

यदि वही पापग्रहों से युक्त हो तो वह जातक दूसरों को ठगता रहेगा। जालसाजी, टएटघएट आदि से धन अर्जन करेगा। उसकी व्यापार में धन-हानि होगी और वह स्वभावतः बड़ा ही खर्चीला होगा।

अब धनभावस्थित बारह राशियों के सोदाहरण फलादेश का विचार किया जा रहा है।

धनभावगत मेषराशि-विचार

जिस जातक के धनभाव मे मेषराशि हो वह निश्चय ही जमीन, जायदाद, कृषिक्षेत्र का अधिपति होता और चौपायों द्वारा धनसग्रह

करता है। मेष राशि का स्वामी मंगल होता है और इस राशि के नक्षत्र अश्विनी, भरणी और कृत्तिका (१ चरण) के स्वामी केतु, शुक्र और सूर्य होते हैं। इन ग्रहों एवं नक्षत्रों की अनुकूल और प्रतिकूल स्थिति का विचार करके ही दैवज्ञ को इस भाव का फलादेश कहना चाहिये।

अब नीचे सोदाहरण धनराशि के जातक के फलादेश का विचार किया जा रहा है।
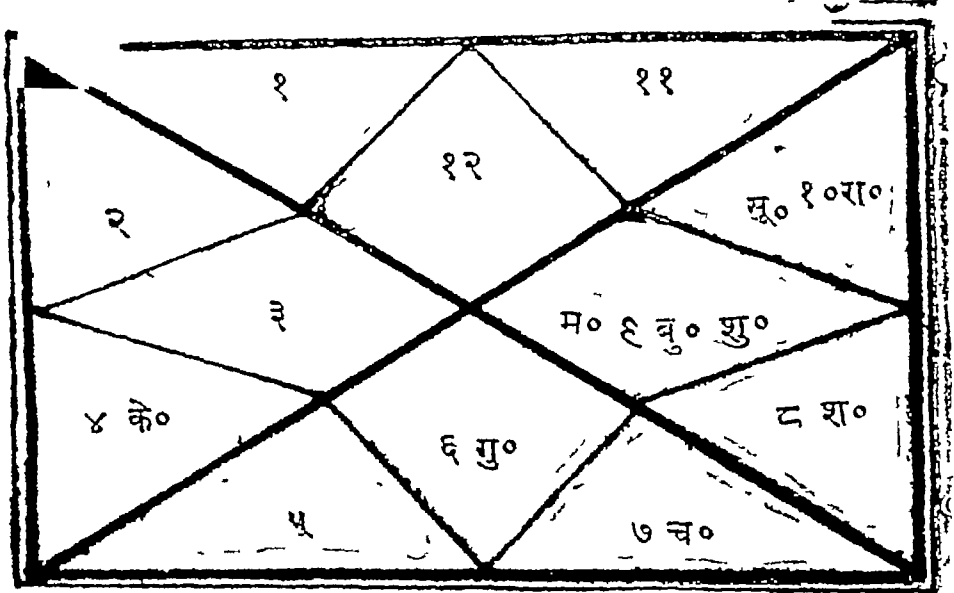
यहां धनेश मंगल पूर्वाषाढा नक्षत्र में दशमभाव मे स्थित है। नक्षत्र स्वामी शुक्र मंगल से युक्त है। अतः जातक के लिए यह धन का पूर्ण योग है। वह पितृसम्पत्ति का अधिकारी और करोड़पति होगा। उसे जायदाद, मकान, वाहनादि का पूर्ण सुख प्राप्त होगा। मंगल की महादशा के अन्तर्गत बुध और शुक्र की अन्तर-प्रत्यन्तरदशाओं मे द्रव्य का लाभ और व्यापार में उन्नति का विशेष योग है। यहां सप्तमेश बुध दशम मे और दशमेश गुरु सप्तम मे पड़े हैं। दोनों ग्रह सात्त्विक प्रकृति के हैं। इस योग द्वारा भी जातक को स्त्रीपक्ष से लाभ, सम्मानप्राप्ति तथा राजकार्य में सिद्धि का योग है।

धनभावगत वृषराशि-विचार

धनभावगत वृषराशिवाला जातक कवि, प्रकाशक, व्याख्याता और मुद्रण कार्य से अर्थसंग्रह करता है। वृषभ राशिका स्वामी शुक्र होता है और इस राशि के नक्षत्र कृत्तिका (३ चरण), रोहिणी और मृगशिरा (२ चरण) के स्वामी सूर्य, चन्द्र और मगल होते हैं। इन ग्रहों और नक्षत्रों की अनुकूलता और प्रतिकूलता पर ही धनभावगत वृषराशि के जातक का फलादेश कहना चाहिये।
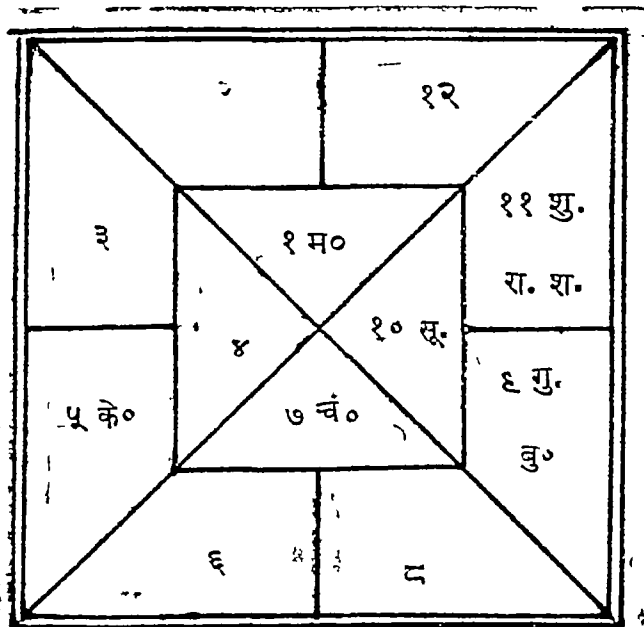
प्रस्तुत कुण्डली में वृषराशि का स्वामी शुक्र लाभस्थान में पड़ा है जो लाभ देनेवाला है। नक्षत्रों के स्वामी सूर्य, चन्द्र और मगल केन्द्र में ही पड़े हैं जो राजपक्ष, स्त्रीपक्ष तथा चल अचल सम्पत्ति के लिए शुभ-कारक हैं। इस तरह यह जातक राजयोगी होने के साथ ही इसका कोष भरा रहेगा। इसे कुटुम्बसुख अच्छा मिलेगा। स्वय यह सुदर नेत्र और

वचनवाला तथा उत्तम व्याख्याता होगा। इस ग्रहस्थिति से जातक के धनपक्ष की सुस्थिरता का योग स्पष्ट दीखता है ।

धनभावगत मिथुनराशि-विचार

धनभावगत मिथुन राशिवाला जातक व्यापार, विशेषकर औषधादि-निर्माण और उसमे भी अपनी विशेष प्रतिभा द्वारा धनसग्रह करेगा। मिथुन राशिका स्वामी बुध और इस राशि के नक्षत्रों मृगशिरा (२ चरण), आर्द्रा और पुनर्वसु (३ चरण) के स्वामी मंगल, राहु और गुरु हैं । इन्हींके आधारपर धनगत मिथुनराशि के जातक का फल शुभ या अशुभ होगा ।
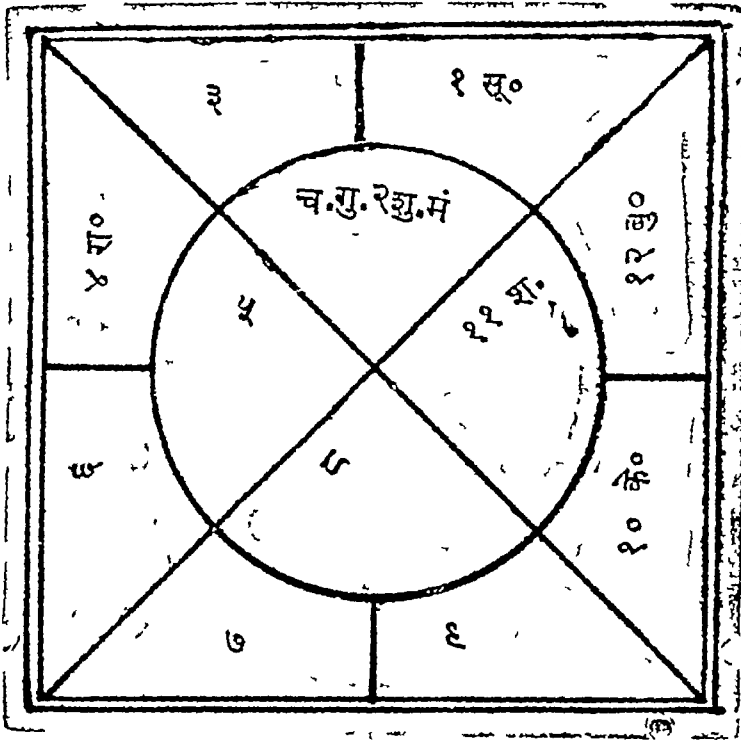
यहा धनेश बुध लग्न भाव मे पड़ा है जो उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र का है। उत्तरा भाद्रपदा का स्वामी शनि दशम भाव मे स्वगृही होकर बैठा है। लग्न में चन्द्र, शुक्र, गुरु और मंगल दिग्बली होकर बैठे हैं । इन योगों

द्वारा यह जातक औषधियों के व्यवसाय से धनसंग्रहकर मान-प्रतिष्ठा आदि पायेगा। कारण बुध औषधियों का कारक बताया गया है। जातक को जायदाद-मकान आदि का भी अच्छा सुख मिलेगा। बुध की महादशा मे इसे अकस्मात् द्रव्यलाभ होगा। शनि महादशा मे भी मकान-जायदाद की वृद्धि का योग है। इस समय भी जातक सपन्न और सम्मानित होना चाहिये।

धनभावगत कर्कराशि-विचार

धनभावगत कर्कराशिवाला जातक राजयोगी और चल-अचल सम्पत्ति का स्वामी होता है। इस राशि का स्वामी चन्द्र और राशिनक्षत्र पुनर्वसु (१ चरण), पुष्य और आश्लेषा के स्वामी गुरु, शनि और बुध हैं। इनकी अनुकूलता-प्रतिकूलता पर ही जातक उपर्युक्त राशिफल में विशेषता या हीनता पाता है।
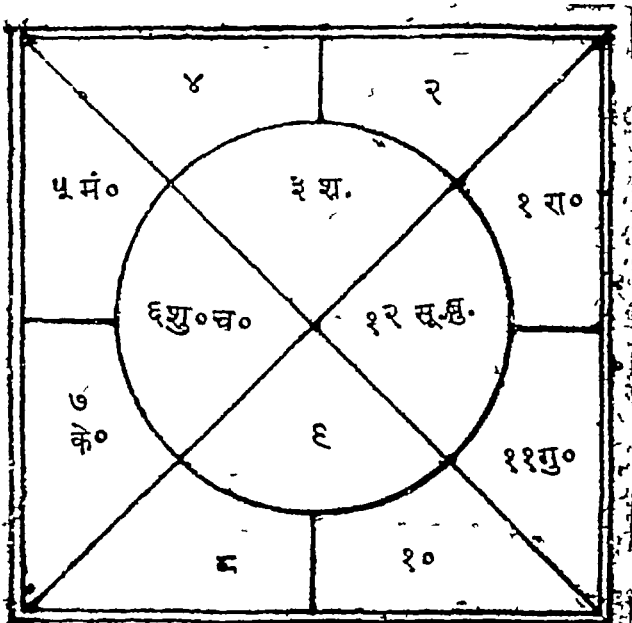
यहा धनभाव का स्वामी चन्द्र हस्तनक्षत्र का होने से स्वगृही होगया

है। सिवा चन्द्र और शुक्र दोनो दिग्बली होकर चतुर्थ मे बैठे हैं। नक्षत्रस्वामी शनि, गुरु और बुध केन्द्र और कोणगत हैं। फलतः जातक राजयोगी होने के साथ ही कोष-रत्नादि तथा चल-अचल सम्पत्ति से भरपूर होगा। यह महात्मा, साधु-सन्तो की सेवा मे द्रव्य का विशेष व्यय करेगा, कारण गुरु-चन्द्र केन्द्र एवं त्रिकोण में स्थित हैं।

धनभावगत सिंहराशि-विचार

धनभावगत सिंहराशिवाला जातक राजयोगी, राजसम्मानभोगी, न्यायविशारद और न्यायकार्य द्वारा धनसंग्रही और विशेष भाग्यवान् होता है। सिंहराशि का स्वामी सूर्य और राशिनक्षत्र मघा, पूर्वा और उत्तरा (१ चरण) के स्वामी केतु, शुक्र और सूर्य हैं। इन्हींकी अनुकूलता-प्रतिकूलता पर धनभावगत सिंहराशिवाला जातक उपर्युक्त फलो मे उन्नति कर लेता या अवनत हो जाता है।
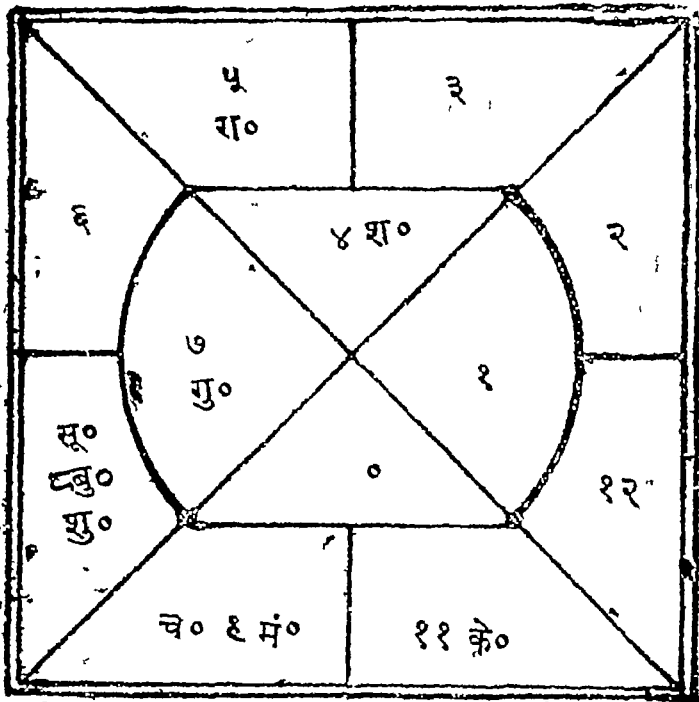
प्रस्तुत जन्मकुंडली में धनेश सूर्य अनुराधा नक्षत्र मे स्थित है और अनुराधा का स्वामी शनि लग्न मे स्थित है जो अकस्मात् धनप्राप्ति का योग बनाता है। साथ ही धनभाव मे राहु की स्थिति से अकस्मात् द्रव्यनाश का भी योग लाता है। फलतः यह जातक कई प्रकार के व्यापारों से जहां पर्याप्त द्रव्यलाभ करता है वहीं उनसे उसे घाटा भी उठाना पड़ता है। किन्तु यह जातक व्यापारियों मे प्रतिष्ठित और माननीय होगा। भाग्येश गुरु केन्द्र मे स्थित होने से जातक पदवीधर तथा जायदाद का मालिक भी होगा। फिर भी सूर्य के घर में बैठे राहु द्वारा जीवन में अकस्मात् हानि के भी अनेक प्रसग आयेंगे।

धनभावगत कन्याराशि-विचार

धनभावगत कन्याराशिवाला जातक व्यापार तथा वैद्यक से धनसग्रह करेगा। इस राशि का स्वामी वुध और राशिनक्षत्र उत्तराफाल्गुनी (३ चरण), हस्त और चित्रा (२ चरण) के स्वामी सूर्य, चन्द्र और मंगल हैं। इन्हींकी शुभाशुभता पर फल मे वृद्धि-क्षय का विचार करना चाहिये।
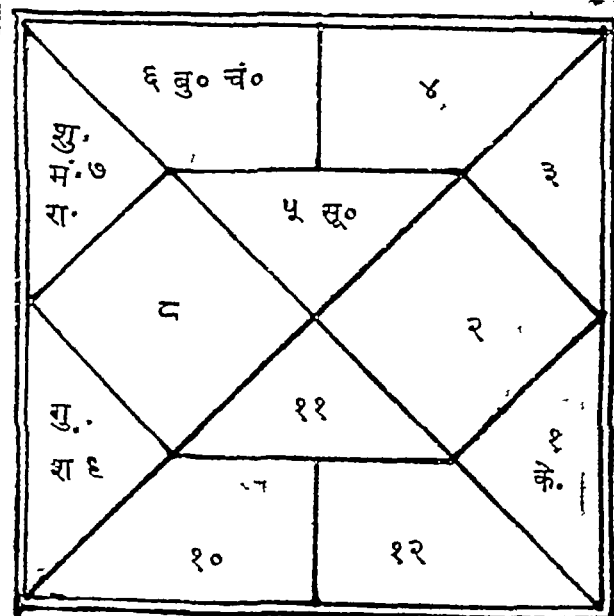
प्रस्तुत कुण्डली मे कन्या का स्वामी बुध हस्तनक्षत्र का है जो हस्तनक्षत्र के स्वामी चन्द्र के साथ धनभाव मे स्थित है। दोनों कारक ग्रह होने से इस जातक के राजयोगी होने में तो कोई सन्देह ही नहीं, सिवा इसका कोष भी अचल और प्रभूत रहेगा। लग्न मे सूर्य होने से द्रव्य विशेषतः शुभकार्य मे ही व्यय होगा। स्वगृही गुरु पंचम मे होने से जातक ज्योतिप का प्रेमी या ज्ञाता भी हो सकता है। इसे सन्तानसुख भी उत्तम है।

धनभावगत तुलाराशि-विचार

धनभावगत तुलाराशिवाला जातक रत्नादि से धनसंग्रहकर्ता, पुस्तकों का लेखक-प्रकाशक, कवि और व्याख्याता तथा परम साहसी होता है। तुला का स्वामी शुक्र और राशिनक्षत्र चित्रा (२ चरण), स्वाती और विशाखा (३ चरण) के स्वामी मंगल, राहु और गुरु हैं। इन्हींके बलाबल पर इस भाव के तुलाराशिवाले जातक का फल कहना चाहिये।
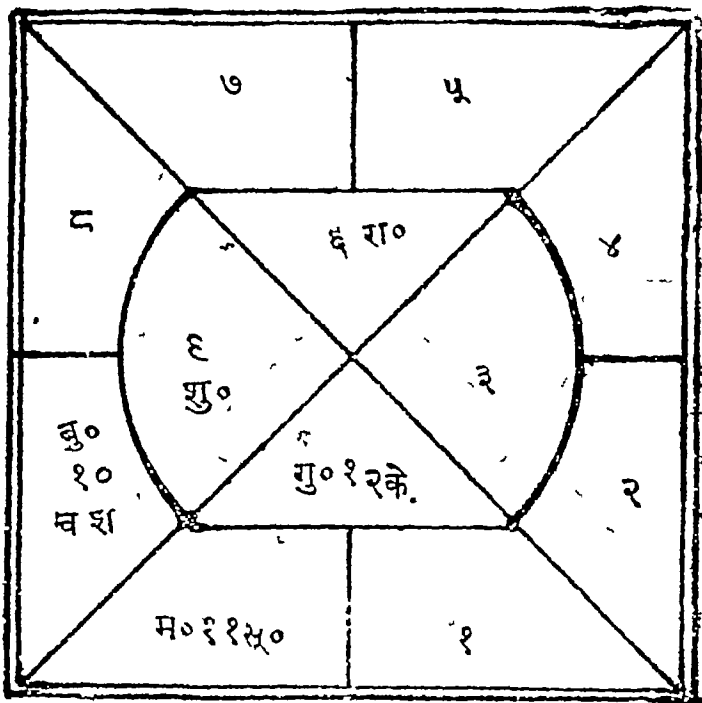
यहां धनेश शुक्र उत्तराषाढा का है और उत्तराषाढा का स्वामी सूर्य द्वादशभाव का स्वामी है। शुक्र गुरु के स्थान पर बैठा है जो शत्रुराशि का है। फलतः जातक द्रव्यसंग्रह नहीं कर पायेगा। धनभाव का स्वामी शुक्र चतुर्थ में होने से यह जातक अच्छा लेखक और पुस्तकप्रकाशक होगा। गुरु-शुक्र का सम्बन्धयोग होनेसे स्वगृही शनि की दशा में इसे अच्छा द्रव्यलाभ कराने के सिवा यह योग समुद्रयात्रा का भी कारक है।

धनभावगत वृश्चिकराशि-विचार

धनभावगत वृश्चिकराशिवाला जातक जमीन जायदाद और दूसरों की सम्पत्ति का अधिकारी बनता है। वृश्चिक का स्वामी मंगल और राशिनक्षत्र विशाखा (१ चरण), अनुराधा और ज्येष्ठा के स्वामी गुरु, शनि और बुध हैं। इन्हींके आधार जातक शुभाशुभ फल पाता है।
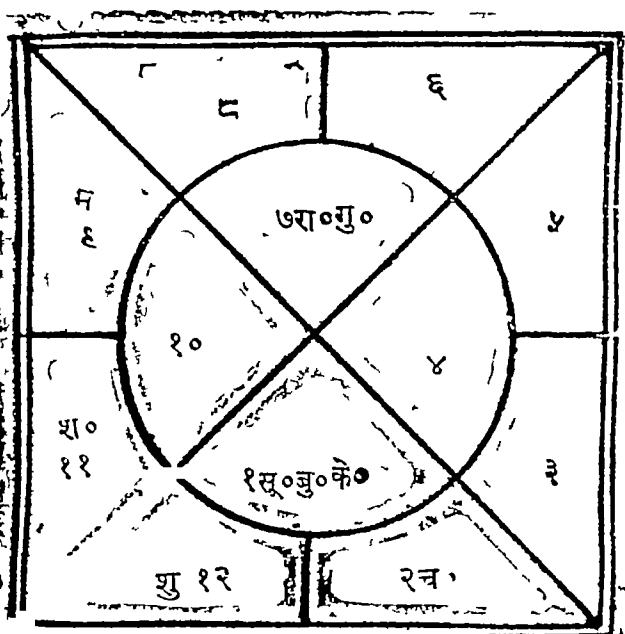
यहां वृश्चिक का स्वामी मंगल तृतीय भ्रातृभाव में पूर्वाषाढा नक्षत्र

का है और पूर्वाषाढा का स्वामी शुक्र उच्च होकर षष्ठभाव मे स्थित है। अतः यह जातक भ्राता की जायदाद, संपत्ति आदि का अधिकारी होगा। षष्ठस्थान मे शुक्र होने से शत्रु द्वारा नष्ट-भ्रष्ट संपत्ति ही प्राप्त होगी। स्वयं भी यह राजयोग का भोक्ता रहेगा, कारण शुक्र का द्वितीय और दशम से सम्बन्ध है।

धनभावगत धनराशि-विचार

धनभावगत धनराशिवाला जातक ज्योतिष आदि विद्याओ से धनसग्रह करता है। किन्तु वह धन सुस्थिर नही रहता, प्रायः शुभकार्य मे व्यय होता रहता है। फिर भी इस जातक को कभी धन की कमी नहीं पड़ती। शेष ग्रहो की अच्छी स्थिति होने से धन अचल भी हो सकता है। धनराशि का स्वामी गुरु और राशिनक्षत्र मूल, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा (१ चरण) के स्वामी केतु, शुक्र और सूर्य हैं। इनके आधार पर जातक का फल कहना चाहिये।
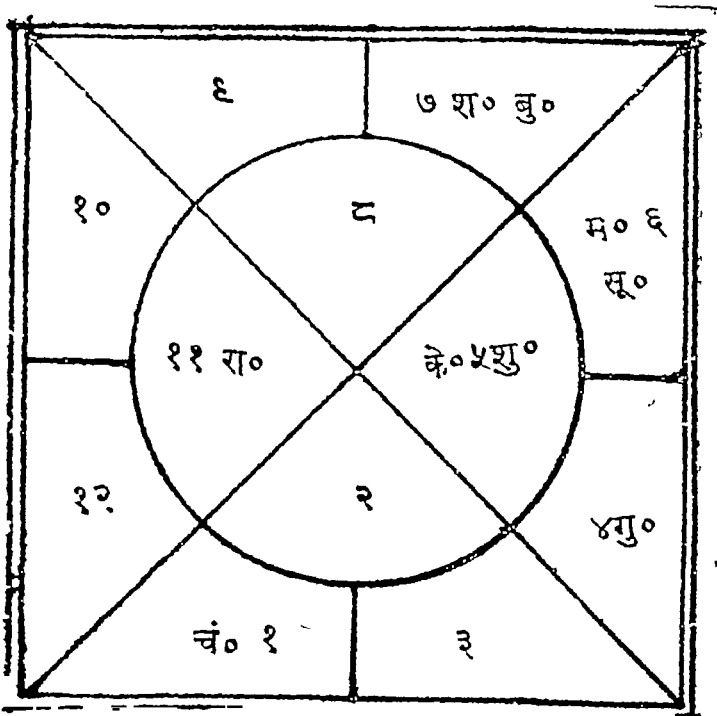
यहा धनभावका स्वामी-गुरु उच्च और पुष्यनक्षत्र का है। पुष्य का स्वामी शनि द्वादश में उच्च का होकर पड़ा है। अतः इस योग से जातक की धनस्थिति जहा बिगड़ जाती है वहीं वह उसे दरिद्र नहीं बनाता। अपितु आवश्यकतानुसार धन एकत्रकर व्यय करा देता है, सग्रह होने नहीं देता। फिर भी किसी उच्च कार्य में धन की कमी से कभी बाधा नहीं आती।

धनभावगत मकरराशि-विचार

धनभावगत मकरराशिवाला जातक अपने पैतृक धन का तभी उपभोग कर सकता है जब उस भाव का स्वामी शनि अपने नक्षत्र में और शुभ-स्थान पर हो। अन्यथा यदि वह अशुभस्थान पर होगा तो जातक पैतृक धन त्यागकर वैराग्य धारण कर लेगा। मकरराशि का स्वामी शनि है और राशिनक्षत्र उत्तराषाढा (३ चरण), श्रवण और धनिष्ठा (२ चरण) के स्वामी सूर्य, चन्द्र तथा मगल हैं। इनकी अनुकूलता-प्रतिकूलता पर ही जातक का इस भाव का शुभाशुभ फल निर्भर है।
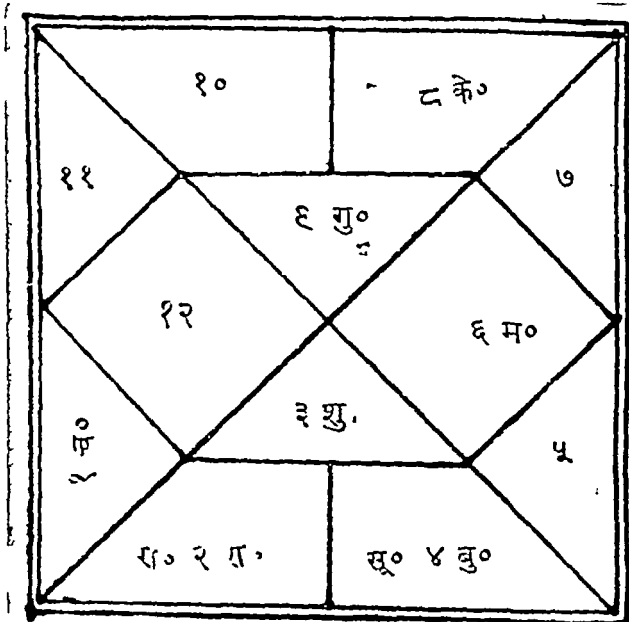
प्रस्तुत कुण्डली में धनराशि का स्वामी शनि कृत्तिकानक्षत्र का है जिसका स्वामी सूर्य अष्टम भाव में स्थित है। अतः इस जातक के लिए धन-जन, परिवार आदि त्यागकर संन्यस्त होने का योग है। सूर्य और बुध की अष्टम में युति से भी प्रव्रज्या योग बनता है। धनभावका त्रिकोण षष्ठ और दशम भाव है और इन दोनों भावों में स्थित ग्रह धनभाव के शत्रु हैं। अतः जातक पूर्वार्जित द्रव्य का भी त्याग कर देगा। किन्तु लग्नस्थ स्वगृही गुरु की पञ्चम और नवम भाव पर पूर्ण दृष्टि होने से इस जातक के पूर्ण तत्त्वज्ञानी होकर उत्तम वक्ता, विद्वान् और उपदेशक भी होने का योग है।

धनभावगत कुंभराशि-विचार

धनभावगत कुंभराशिवाला जातक लाटरी आदि द्वारा अकस्मात् धन पाता है। यदि राशि का स्वामी शनि उच्च हो तो वह विपुल धन पाकर उसे संग्रहीतकर सदा कोष भरा रखता है। भले ही वह मैले-कुचैले या साधारण वस्त्र पहने या साधारण खानपान रखे, पर उसके पास अत्यधिक धन रहता। यदि राशि का स्वामी नीच हो तो पर्याप्त धन संग्रहकर उसका व्यय भी पर्याप्त कर देता है। कुंभराशि का स्वामी शनि है और राशिनक्षत्र धनिष्ठा (२ चरण), शततारका और पूर्वाभाद्रपदा (३ चरण) के स्वामी मंगल, राहु और गुरु हैं।
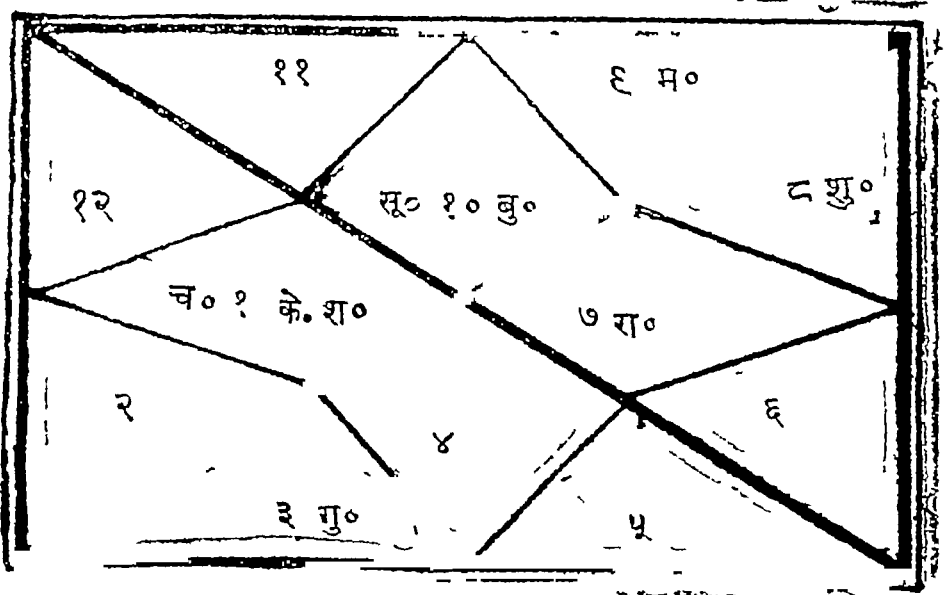
इस कुण्डली मे धनभाव का स्वामी शनि अश्विनीनक्षत्र का होकर चतुर्थ भाव में नीच बनकर बैठा है। अश्विनी का स्वामी भी वहीं स्थित है। सिवा शनि चन्द्र से दूषित है। अतः इस जातक को अधिक धन होते हुए भी विलास आदि मे उसका पर्याप्त व्यय होगा।

धनभावगत मीनराशि-विचार

धनभावगत मीनराशिवाला जातक भावेश के उच्च होने पर राजयोग पाता और उसका कोष अत्यन्त भरा रहता है। यदि भावेश नेष्ट स्थान पर हो तो धन अधिक होते हुए भी व्यय भी अत्यधिक होगा, विशेषकर यात्रा में। इसे कुटुम्बसुख भी अच्छा रहेगा। मीनराशि का स्वामी गुरु है और राशिनक्षत्र पूर्वाभाद्रपदा (१ चरण), उत्तरा भाद्रपदा और रेवती के स्वामी गुरु, शनि और बुध हैं।
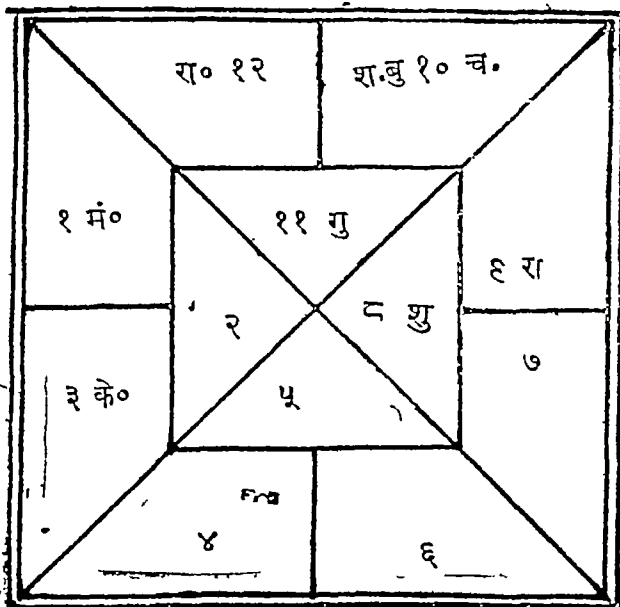
प्रस्तुत कुण्डली मे मीनराशि का स्वामी गुरु लग्नगत पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र का है और नक्षत्रस्वामी गुरु भी स्वनक्षत्री होकर बैठा है। गुरु शनि के घर मे और शनि गुरु के घर मे बैठने से दोनों का परस्पर सम्बन्ध हुआ। इस योग से जातक राजकोष से परिपूर्ण, सम्मानित और कुटुम्ब-सुख से सम्पन्न होता है।

धनभाव के प्रमुख योगों का विचार

यहाँतक धनभावगत बारह राशियो के फलादेशों का सोदाहरण विवेचन किया जा चुका। अब प्रसंगतः इस भाव के प्रमुख ६ योगों का विवेचन किया जा रहा है।

(१) अकस्मात् धनलाभ योग—यदि धनभाव का स्वामी शनि चतुर्थ, अष्टम या द्वादश भाव मे बुधनक्षत्रो पर स्थित हो तथा इन नक्षत्रों का स्वामी बुध सप्तम केन्द्र मे स्वगृही होकर बैठे तो वह अकस्मात् धनलाभ योग होता है। ऐसे योगवाला जातक जन्म से निर्धन, रंक होने पर भी बुध-महादशा मे शनि का अन्तर आने पर अकस्मात् धन पाकर राजा-सा बन जाता है।

(२) अकस्मात् धननाश योग—यदि धनभाव मे कर्क का स्वगृही चन्द्र शनिनक्षत्र पर स्थित हो और अष्टम भाव मे स्वगृही शनि चन्द्रनक्षत्र पर स्थित हो तो दोनों की परस्पर पूर्णदृष्टि होने से वह अकस्मात् धननाश-योग बन जाता है। इस योगवाला जातक शनिमहादशा मे चन्द्र का अंतर आने पर अपना सम्पूर्ण धन अकस्मात् खो देगा। वास्तव मे ऐसा जातक धनी होने पर भी आरम्भ से ही वह धन उसके पास नहीं रहता, वरन बैंक आदि मे उससे दूर जमा रहता और उक्त दशा मे उस धन के रक्षक बैंक आदि का दिवाला बोल जाता है।

इसमें एक विशेषता है—यदि ये ही स्वगृही चन्द्र और शनि परस्पर के

नक्षत्रों को छोड़ शेष दो-दो नक्षत्रों पर रहकर स्वगृही बने हों तो नष्ट होनेवाले धन का कुछ अंश जातक को पुनः प्राप्त होकर रहेगा।

(३) क्रमिक धननाश योग—यदि धनभाव का स्वामी बुध गुरु-नक्षत्रों पर पड़ा हो और गुरु अष्टम भाव मे बुधनक्षत्रो पर पड़ा हो तो वह क्रमिक धननाश योग होता है। इस योगवाला जातक स्वभावतः धनभाव के निर्बल हो जाने से क्रमशः अपना धन विलास आदि मे खोता रहेगा।

(४) राजदण्डकृत धननाश योग—यदि धनभाव का स्वामी सूर्य लग्न में शनिनक्षत्र पर स्थित हो और शनि लाभभाव मे स्थित होकर सूर्य पर तृतीय पूर्ण दृष्टि डालता हो तो वह राजदण्डकृत धननाशयोग होता है। ऐसे योगवाला जातक मुकदमेबाजी, राजदण्ड, घूंस देने आदि मे अपना धन गंवा देगा।

(५) अचल सम्पत्तिनाश योग—यदि धनभाव का स्वामी बुध स्वगृही होकर चित्रानक्षत्र पर स्थित हो और चित्रानक्षत्र का स्वामी मगल चतुर्थ में पड़ा हो तो वह अचल सम्पत्तिनाश योग होता है। इस योग द्वारा जातक की अचल सम्पत्ति जमीन-जायदाद क्रमशः नष्ट होती जायगी।

(६) धनसंग्राहक योग—यदि धनभाव का स्वामी मगल बुध के नक्षत्र, विशेषकर ज्येष्ठा में स्थित हो तो वह धनसग्राहक योग होता है। इस योग द्वारा जातक विपुल धन अर्जनकर उसका सग्रह भी करेगा। यदि बुध के अन्य नक्षत्र आश्लेषा पर धनेश मगल रहेगा तो जमीन-जायदाद बढ़ायेगा और रेवती पर हो तो बहुत अधिक सग्रही अर्थात् कजूस बनायेगा।

इसमे एक विशेषता है—यदि यही मगल विशाखा नक्षत्र मे पड़ा हो तो उस नक्षत्र का स्वामी गुरु त्रिकस्थान (३ और ६ भाव) का स्वामी होता है। फलतः जातक धनवान् न होकर दरिद्री बन जाता है।

(७) धन-असंग्राहक योग—धनभाव का स्वामी गुरु स्वगृही होकर पूर्वाषाढा नक्षत्र पर स्थित हो और उस नक्षत्र का स्वामी शुक्र द्वादश मे पड़ा हो तो वह धन-असंग्राहक योग होता है। इस योग द्वारा जातक धन अर्जन करता हुआ भी उसका संग्रह नहीं कर पाता।

(८) धनवृद्धि योग—धनभाव का स्वामी गुरु उच्च का होकर नवम भाव मे स्वगृही नक्षत्र का हो तो वह धनवृद्धि योग होता है। इस योग द्वारा जातक स्वयं तो विपुल धन अर्जन करता ही है, सिवा उसे पैतृक सम्पत्ति भी प्राप्त होती है।

(९) कोषवृद्धि योग—धनभाव का स्वामी सूर्य हो और लग्न मे उच्च का गुरु पुनर्वसु नक्षत्र पर हो तो वह कोषवृद्धि योग होता है। इस योग के द्वारा जातक जहा मुद्रात्मक धनवान् होता है वही रत्न, स्वर्णादि से उसके कोष की भी वृद्धि होती है।

यहा यह ज्ञातव्य है कि जन्म कुण्डली के योग प्रायः एक दूसरे भाव से सम्बद्ध हुआ करते हैं। अतएव ऐसे सभी योगो का विचार द्वादश भावों के विवेचन के बाद एक पृथक् प्रकरण में किया जायगा। यहा तो संक्षेप तत्तद्-भाव के विशेष योगों पर ही प्रकाश डाला गया है।

चतुर्थ प्रकरण समाप्त

प्रथम भाग समाप्त